International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

मुगलकालीन भारत में संगीत कला का विकास

मानवेन्द्र कुमार यादव
शोधध्येता, शासकीय कन्या महाविद्यालय रांझी, जिला–जबलपुर
सम्बद्ध – रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

मुगल शासक संगीत के महान रक्षक थे। उन्हें अतीत काल से ही संगीत के विकास की परम्परा से प्रेरणा मिली थी। बाबर और हुमायूँ दोनों संगीत प्रेमी थे किन्तु अकबर का काल संगीत कला की दृष्टि से सर्वोत्तम रहा। भारतीय संस्कृति में गतिशील तत्वों की खुसरों जैसे विद्वान रहे हैं। साथ ही प्रत्येक कला अपने चरमसीमा को छू लेने का प्रत्यत्न करती थी। इसका प्रमुख कारण था तत्कालीन शासकों के द्वारा संगीत के क्षेत्र में अधिक रूचि का लेना था। यही कारण था कि मान्यता प्राप्त कलाकारों को आवश्यकता पड़ने पर तलवार भी उठाने की शिक्षा राज्य के द्वारा प्राप्त कराई जाती थी। उस समय के संगीतज्ञ संगीत के अलावा नीति के पंडित भी हुआ करते थे।[1]

मुस्लिम सूफी संतों ने भी समकालीन संगीत के विकास में बहुमूल्य योगदान दिया। इन सूफी साधकों ने संगीत का एक खास ढंग से प्रचार किया। सल्तनत काल भारतीय संगीत के इतिहास में अभिनव प्रयोगों का युग था। इस काल में नवीन वाद्यों, गायन–पद्धतियों एवं रागों आदि का आविष्कार हुआ। मध्यकालीन संगीत–परंपरा के आदि संस्थापक प्रसिद्ध कवि, इतिहासकार एवं दार्शनिक अमीर खुसरों थे।

मध्यकालीन भक्ति–आन्दोलन के विकास ने भी संगीत के विकास में भारी योगदान दिया। 1485–1533 ई0 के बीच उत्तर भारत में भक्ति–संगीत का काफी प्रचार–प्रसार हुआ और भक्ति–आंदोलन के फलस्वरूप भजन व कीर्तन के रूप में संगीत जगह–जगह फैलने लगा। बंगाल के चैतन्य महाप्रभु ने कीर्तन–शैली को जन्म दिया। यह शैली उनके पर्यटन के साथ–साथ उत्तर–भारत में भी लोकप्रिय होती गई। इस प्रकार सल्तनल–काल संगीत–कला की दृष्टि से भी कम महत्वपूर्ण नहीं रहा। हिन्दू तथा मुसलमान कलाकारों ने आपसी तालमेल से इस काल में संगीत को एक विशेष दिशा प्रदान की जो जाति–धर्म बंधन के ऊपर उठकर मानव को मानव के प्रति प्रेम का संदेश देती है।

भारतवर्ष के इतिहास में सोलहवीं शताब्दी के मध्य से अठारहवीं शताब्दी के मध्य तक का काल मुगल साम्राज्य का रहा है, हालाँकि मुगलों के आगमन का आधिपत्य सोलहवीं शताब्दी के प्रारंभ में ही हो गया था। बाबर का राज्यकाल सिर्फ चार वर्ष (1526–1530) तक रहा। अपने अल्पकालीन समय में भी बाबर अपने संगीत प्रेम और मर्मज्ञता के फलस्वरूप संगीत गोष्ठियों के लिए भी समय निकालता था। अवसर मिलने पर यात्रा में भी बाबर गान गोष्ठियों का आयोजन करता था और उनमें संगीत का आनंद लिया करता था। उसके पुत्र एवं बादशाह हुमायूँ (1530–1556) को संगीत प्रेम विरासत में मिला। हर सोमवार और बुधवार मुराद के दिन कहे जाते थे। हुमायूँ सोमवार और बुधवार को गाना सुनता था, विशिष्ट लोगों को दरबार में बुलाकर उनके मनोरथ की सिद्धि करता था। हुमायूँ के गायकों और वादों की सूची में 29 गायकों एवं वादकों के नाम मिलते हैं।

तानसेन अकबर के नवरत्नों में से एक थे। तानसेन के रचे हुए बहुत ध्रुपद प्राप्त होते हैं जिनमें पादशाह अकबर के गुणगान हैं। उस समय यह प्रथा थी कि जिसके राजाश्रय में जो गायक रहता था, वह अपनी रचनाओं में उस आश्रयदाता का गुणगान अथवा उसका नाम डाल दिया करता था। उस समय 'ध्रुपद' गायन शैली तथा 'बीन' (वीणा) वादन का प्रचार था। आधुनिक 'ख्याल गायन शैली' का तब तक आविष्कार नहीं हुआ था। इसलिए 'ध्रुपद' गायक ही विभिन्न रागों में नए–नए ध्रुपदों की रचना करते थे, जो अधिकतर बृजभाषा में रचे गए थे, क्योंकि अधिकतर कलाकारों का कार्यक्षेत्र बृज भूमि के आस–पास का रहा था। तानसेन के अतिरिक्त अन्य प्रमुख ध्रुपद गायकों के नाम थे, बैजूबावरा, गोपाल, हरिदास, सूरदास, रामदास आदि। अकबरी दरबार के कुछ प्रमुख कलाकारों के नाम मिलते हैं जिनमें रामदास, सुभान खाँ, सुरजान खाँ, मियाँ चाँद, विचित्र खाँ, सरोद खाँ, मियाँ लाल, चाँद खाँ एवं शहाब खाँ काफी लोकप्रिय थे।

शाहजहाँ (1627–1658) अत्यंत रसिक प्रकृति का पादशाह था और संगीत मर्मज्ञ भी था। ऐसे प्रमाण मिलते हैं जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि वह प्रतिदिन अंतःपुर में एक–डेढ़ घंटे तक संगीत का

आनंद लेता था। विलास खाँ के दामाद लाल खाँ को शाहजहाँ ने ''गुनसमन्दर'' की उपाधि से विभूषित किया था। शाहजहाँ की संगीत प्रियता इस बात से प्रमाणित है कि एक बार उसके दरबारी गायक खुशहाल खाँ और विसराम खाँ ने शाहजहाँ को टोड़ी राग गा कर ऐसा मंत्र मुग्ध किया कि मुर्शिद खाँ को औरंगजेब के साथ दक्षिण भेजने के आज्ञा पत्र पर बिना पढ़े हस्ताक्षर कर दिया। बाद में मालूम पड़ने पर खुशहाल खाँ को दंड स्वरूप दरबार में आनुवंशिक स्थान से वंचित होना पड़ा। जहाँगीर के समान शाहजहाँ भी कला प्रेमी और स्वयं गायक भी था। संगीतज्ञ, नृत्यकारों और गायकों की गोष्ठी में वह विशेष रूचि रखता था। अंतःपुर में भी उसका यही नियम था और दीवान–ए–खास में प्रतिदिन वाद्य वादन और संगीत हुआ करता था।[2]

औरंगजेब के शासनकाल में संगीत का विकास थोड़े समय के लिए अवरूद्ध रहा जिसका कारण औरंगजेब की धार्मिक कट्टरता बताया जाता है। ऐसा भी कहा जाता है–संगीत को संरक्षण न देने पर भी औरंगजेब संगीत में रूचि रखता था और इसके सिद्धांत पक्ष को अच्छी तरह समझता था। बहादुरशाह (1707–1712) और विशेष रूप के मुहम्मदशाह (1719–48) के समय में संगीत का पुनरूद्धार हुआ। मुहम्मदशाह स्वयं भी प्रसिद्ध गायक था और उसने अनेक ''ख्याल'' रचे जिनमें से कुछ आज भी प्रचलित हैं। मुहम्मदशाह के संरक्षण में सत्रहवीं शती के एक महत्वपूर्ण संगीत संबंधी ग्रंथ संगीत परिजात का संस्कृत से फारसी में अनुवाद हुआ। मुगल साम्राज्य का पतन हो जाने पर संगीत आंचलिक राज्यों के दरबारों में परवरिश पाता रहा, हालाँकि इतने शानदार स्तर पर नहीं। उन्नीसवीं सदी के आरंभ में जयपुर के महाराजा प्रतापसिंह के दरबारी संगीतकारों ने संगीतसार नामक एक संगीत ग्रंथ का संकलन किया। 1813 ई0 में पटना के एक सामंत मुहम्मद रिजा ने **नगमात–ए–असाफी** की रचना की जिसे उत्तर भारत में आधुनिक भारतीय संगीत का अग्रदूत माना जाता है।[3]

हिन्दू–मुसलमानों की मिली–जुली संस्कृति का जैसा स्पष्ट विकास भारतीय संगीत के क्षेत्र में देखने को मिलता है वैसे अन्यत्र नहीं। अमीर खुसरों को भारतीय संगीत में अनेक फारसी एवं अरबी तत्वों के समावेश का श्रेय दिया जाता है। इस समय से लेकर मुगलकाल के समय तक भारतीय राजाओं के दरबार में भारतीय संगीत के साथ–साथ विदेशी संगीत, विशेष रूप से ईरानी संगीत सुना जाता था। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय संगीत में परिवर्तन तो हुआ किन्तु स्वरूप बना रहा।[4]

मुगलकालीन शासकों मे अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ संगीत के महान संरक्षक थे उनके दरबारों में संगीतज्ञों का बहुत सम्मान होता था। महान गायक तानसेन अकबर के नौरत्नों में शामिल थे। उसके मंत्री राजा मानसिंह ने गायकी की ध्रुपद शैली में नये आयाम जोड़े। उसी के काल में भारतीय रागों में फारसी और अन्य विदेशी सुरों के प्रभाव में काफी परिवर्तन हुये। इस संश्लेषण से हिन्दुस्तानी संगीत को बहुत लाभ हुआ।[5] ग्वालियर, इंदौर, रामपुर और अवध के राजा एवं नवाबों ने भी संगीतज्ञों को विशेष संरक्षण दिया। संगीत के क्षेत्र में संश्लेषण की प्रक्रिया काफी तेज हो गई। रवाब, सरोद, तन्स और दिलरूबा आदि वाद्य यंत्रों का आविष्कार हुआ पुराने वाद्य यंत्रों में सुधार किये गये। तानसेन हरिदास और रामदास आदि विख्यात गायकों ने अकबर की कृपा और अनुग्रह से हिन्दुस्तानी संगीत को नई बुलंदियों पर पहुँचा दिया। विख्यात गायकों में शामिल थे। सूबों में भी यह विद्या खूब फूली फली। कहा जाता है कि मालवा का बाज बहादुर उन दिनों संगीत का महारथी था, ग्वालियर का राजा मानसिंह भी इस विद्या का महान संरक्षक था। प्राचीन हिन्दू रागों में मुस्लिम गायक कुछ परिवर्तन भी करते रहे इस प्रकार सांगीतिक संश्लेषण की प्रक्रिया न केवल अबाध गति से चलती रही बल्कि गति भी पकड़ती रहीं।[6]

भारतीय मुगल शासक के दौरान हिन्दू मुस्लिम का समन्वयक अनुपम व अद्वितीय रहा। अमीर खुसरों को समावेश का श्रेय प्रदान किया जाता। इस समय से लेकर मुगलकाल तक भारतीय राजाओं के दरबार में भारतीय संगीत के साथ–साथ ईरानी संगीत को भी सुना जाने लगा था। जिसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय संगीत के परिवर्तन तो हुआ परन्तु उसके स्वरूप में कोई परिवर्तन न हुआ।[7]

इस प्रकार मुगल शासकों में अकबर जहाँगीर और शाहजहाँ संगीत के महान संरक्षक था। उनके दरबारों में संगीतज्ञों को सम्मानजनक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त होता था, महान गायक तानसेन तो अकबर के नवरत्नों में शामिल और अकबर के शासन काल में संगीत के विभिन्न रागों का सम्मिलन देखने को मिलता है। जो कि फारसी, ईरानी व विदेशी प्रभाव से मिश्रित थे।[8] भारतीय राजाओं नवाबों ने भी संगीतज्ञों को प्रथम प्रदान किया। तानसेन, हरिदास एवं रामदास पर सम्राट अकबर की विशेष कृपा देखने को निम्नवत् हैं। जो कि

संगीत को भारतीय मुगलकालीन शासन में नई बुलंदियों को छुआ कहा जाता है कि मालवा का शासक बाज बहादुर भी संगीत में परिगत एक महानशासन का ग्वालियर का राजा मान सिंह भी संगीत विद्या को प्रश्रय देता इसके अलावा कुछ पुराने हिन्दू रागों में मुस्लिम नाम के कुछ परिवर्तन भी करते रहे इस प्रकार संगीत के विश्लेषण भी प्रक्रिया में गति बनी रही।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वर्मा हरिशचन्द्र : मध्यकालीन भारत, भाग–2 पृ0सं0 557
2. सक्सेना, बी0पी0 हिस्ट्री ऑव दिल्ली पृ0 266–267
3. शेरवानी, पृ0सं0 65–66
4. वर्मा, हरिशचन्द्र मध्कालीन भारत भाग–2 पृ0 557
5. आक्सफोर्ड, 1975 पृ0सं0 25
6. श्रीवास्तव, आशीर्वादीलाल, मध्यकालीन भारत पृ0 46
7. वर्मा हरिशचन्द्र मध्यकालीन भारत पृ0सं0 568
8. शर्मा एल0पी0 मध्यकालीन भारत पृ0 357

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

विवाह संस्कार का मुख्य प्रयोजन

प्रो. मानवेन्द्र पाण्डेय
आचार्य एवं अध्यक्ष (ज्योतिष विभाग)
महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय, करौंदी, ब्रह्मस्थान जिला– कटनी (म.प्र.)

संस्कार शब्द सम उपसर्ग पूर्वक कृञ् धातु से घञ् प्रत्यय करने पर बनता है। संस्कार शब्द का अर्थ होता है ''शारीरिक मानसिक और बौद्धिक शुद्धि के लिए किया गया अनुष्ठान''।

''आत्म शरीरान्यतरनिष्ठो
विहितक्रियाजन्योऽतिशय विशेषः संस्कारः''

मनु ने ''जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद्द्विज उच्यते'' कहकर संस्कार की महत्ता का प्रतिपादन किया है, संस्कार के लिए गृह्यसूत्रों को ही प्रमाण माना गया है। जैसे– पारस्कर गृह्यसूत्र, आश्वलायन गृह्यसूत्र, बौधायन गृह्यसूत्र आदि। गृह्यसूत्र का कहना है कि जीवन का प्रारम्भ गर्भाधान से शुरू होता है। स्त्री–पुरुष के संयोग रूप प्रथम संस्कार का नाम गर्भाधान संस्कार है।

निशिक्तो यत्प्रयोगेण गर्भः संधार्यते स्त्रिया।
तद् गर्भालम्भनं नाम कर्म प्रोक्तं मनीशिभिः।

इस संस्कार के विषय में बृहदारण्यकोपनिषद् के छठे अध्याय के चौथे ब्राह्मण में सृष्टि को स्थिर रखने और समाज को सुयोग्य नागरिक देने के लिए यथार्थ ज्ञान पर प्रकाश डाला गया है। यदि एक स्त्री और पुरुष माता–पिता के रूप में सात्विक बुद्धि से तथा अन्तः करण से इच्छा करें और विधानपूर्वक संस्कारों का अनुसरण करें तो मन इच्छित सन्तान प्राप्त कर सकते हैं। धर्म शास्त्रों का कहना है कि जैसा बीज बोया जाता है वैसा ही वृक्ष उत्पन्न होता है और उस पर वैसे ही फल आते हैं। स्मृतियों में 48 संस्कार बताये गये हैं जिनमें 16 संस्कार प्रसिद्ध हैं–

(1) गर्भाधान (2) पुंसवन (3) सीमन्त (4) जातकर्म (5) नामकरण (6) निष्क्रमण (7) अन्नप्राशन (8) मुण्डन (9) कर्णवेध (10) उपनयन (11) वेदारम्भ (12) केशान्त (13) वृतस्नान (14) विवाह (15) अग्निपरिग्रह (16) अग्नि संग्रह।

सृजन के सूत्रपात की दशा में षोडष संस्कारों में विवाह संस्कार प्रमुख है, विवाह संस्कार का अर्थ पाणिग्रहण संस्कार से है जो आठ प्रकार का है।

(1) ब्राह्मविवाह (2) दैवविवाह (3) आर्श विवाह (4) प्राजापत्य विवाह (5) आसुर विवाह (6) गान्धर्व विवाह (7) राक्षस विवाह (8) पिशाच विवाह। आसुर, पिशाच व राक्षस विवाह अत्यंत निन्दनीय है, आर्श, ब्राह्म व दैव विवाह के प्रचलन का तिरोभाव हो चुका है, गान्धर्व विवाह आजकल प्रेम विवाह के नाम से प्रसिद्ध है, जिसमें वर कन्या दोनों के परस्पर प्रेम से विवाह होता है। ब्राह्मविवाह जो आजकल सर्वत्र बहुतायत से प्रचलित है। यह विवाह संस्कार सृष्टि का मुख्य आधार माना जाता है। श्रुति का वचन है– दो शरीर, दो मन, दो बुद्धि, दो प्राण और दो आत्माओं का समन्वय करके असीम प्रेम के व्रत का पालन करते हुये उमा–आशुतोष के प्रेमादर्श को धारण करते हैं, ब्रह्मचर्य के उपरान्त विवाह करके पुरुष गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता है। यह गृहस्थ आश्रम सभी आश्रमों का आधार है। विवाह संस्कार में दो प्राणी अपने अलग–अलग अस्तित्वों को समाप्त कर एक होते हैं, विश्व में सबसे प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद में वर्णित सविता की पुत्री सूर्या का विवाह इस संस्कार का प्रमाण है, जिसमें सूर्या का विवाह अश्विनी कुमार के साथ होने का उल्लेख है।

गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः।
भगो अर्यमा सविता पुरंधिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः।।

तुम्हारे सौभाग्य के लिए मैं पाणिग्रहण करता हूं, मुझे पति पाकर तुम वृद्धावस्था में पहुंचना। भग, अर्यमा और सविता ने तुम्हें मुझे गृहस्थ धर्म चलाने के लिए दिया है।

विवाह के उपरान्त सूर्या अश्विनी कुमार के साथ रथ में बैठकर जाती है, सूर्या का रथ चांदनी रात में चादर ओढ़े चल रहा है। देवताओं द्वारा आशीर्वचन दिया जाता है कि पति के साथ एकाकार होकर पूर्णता प्राप्त करो, आनन्दपूर्वक रहते हुये वंश वृद्धि करो। विवाह संस्कार के सभी प्रमुख अनुष्ठान पाणिग्रहण, अश्मारोहण, ध्रुव दर्शन, सप्तपदी आदि का उल्लेख अथर्ववेद एवं शत्पथ ब्राह्मण में भी है। जीवन की पूर्णता का मूल आधार विवाह संस्कार को माना गया है, भगवान विष्णु, अग्नि, ब्राह्मणगण बन्धु–बान्धव और ध्रुव

तारा को साक्षी मानकर दो तन, मन तथा आत्मा एक पवित्र बंधन में बंध जाते हैं,

विष्णुर्वै वानरः साक्षी ब्राह्मण–ज्ञाति–बान्धवाः
पंचमं ध्रुवमालोक्य ससाक्षित्वं ममागतः।।

संस्कारों में ज्योतिष की अहं भूमिका होती है क्योंकि शुभा शुभ समय का ज्ञान ज्योतिष के द्वारा होता है विवाह के समय शुभ लग्न एवं मूहुर्त का विचार करना अति आवश्यक होता है। कन्या का विवाह समसंख्यक वर्षों में लड़कों का विवाह विषम वर्षों में करना जीवन के लिए लाभप्रद होता है। मार्ग शीर्ष, माघ, फाल्गुन, वैसाख, जेष्ठ मास विवाह के लिए मुहूर्त ग्रन्थों में शुभप्रद कहे गये हैं।

विवाह के लिए दिन – सोम, बुध, गुरू, शुक उत्तम रवि, मंगल, शनि मध्यम माने गये हैं। वर कन्या के विवाह के लिए अष्टकूट गुण मिलान आवश्यक होता हैं जो मिलकर 36 गुण बनता है। 16 गुण मिलने पर निन्दनीय, 20 गुण तक मध्यम, इसके ऊपर 36 गुण तक उत्तम माना गया है जिसका विचार सभी वर्ण प्रायः करते हैं।

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम्
गण मैत्रं भकूटं च नाड़ी चैते गुणाधिकाः।

नक्षत्र – मृगशिरा, रोहिणी, हस्त, मूल, अनुराधा, मघा, रेवती, स्वाती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराशाढ़, उत्तराभाद्रपद विवाह के प्रशस्त नक्षत्र हैं।

कन्या के लिए बृहस्पति का सबल होना आवश्यक है, लड़के के लिए सूर्य का सबल होना आवश्यक है, और दोनों के लिए चन्द्रमा का सबल होना अत्यन्त आवश्यक है जैसा कि महर्षि गर्ग का कथन है–

कन्यायाः गुरुबलं श्रेष्ठं पुरुषाणां रवैर्बलम्
द्वयोः चन्द्रबलं श्रेष्ठं इति गर्गेण शशितम्।।

दो अलग–अलग कुलों में जन्में स्त्री और पुरुष एक सम्बन्ध के रूप में बंधकर सृष्टि का मुख्य आधार बनते हैं। गृहस्थ जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए स्त्री पुरुष का संग आवश्यक है। नारी पुरुषार्थ चतुष्टय में धर्म, अर्थ, काम तीन पुरुषार्थों की अधिष्ठात्री है। सच्चरित्र भार्या की प्राप्ति से धर्म, अर्थ व काम की प्राप्ति होती है, पुत्रादि की प्राप्ति से पारिवारिक, सामाजिक धर्मों का निर्वहण ठीक तरह से हो पाता है। जैसा कि मुहूर्तचिन्तामणि में लिखा है–

शर्या त्रिवर्गकरणं शुभभीलयुक्ता शीलं शुभं भवति
लग्नवशेन तस्याः।
तस्माद् विवाहसमयः परिचिन्त्यते हि तन्निघ्नतामुपगता
सुतशीलधर्माः।।

मनुष्य जन्म से ही तीन ऋणों से ऋणी बनकर जन्म लेता है। ये तीन ऋण है –देव ऋण, ऋषि ऋण और पितृ ऋण। इन तीनों ऋणों से मुक्ति पुरुषशार्थ चतुष्टय की प्राप्ति विवाह संस्कार का मुख्य प्रयोजन है।

संदर्भ ग्रन्थ :–

1. मुहूर्तचिन्तामणि।
2. विवाहवृन्दावन।
3. षोडष संस्कार।
4. दशकर्म पद्धति।

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

गिट्टी की खदान में कार्यरत श्रमिक का सामाजिक अध्ययन (म.प्र. के अलीराजपुर जिले के विशेष सन्दर्भ में)

कुसुम धार्वे अर्थशास्त्र
पीएच.डी. शोधार्थी, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय,
डॉ. अम्बेडकर नगर (महू) जिला इन्दौर (म.प्र.), भारत

सारांश :– भारत पूर्व से विभिन्न जनजातियों समूहों का निवास स्थान रहा है। श्रम न केवल सम्पूर्ण सामाजिक गतिविधियों का आधार है अनुसूचित जनजाति श्रमिक के लिए श्रम आवश्यकताओं की पूर्ति का एकमात्र साधन है। इस शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य गिट्टी की खदान में कार्यरत श्रमिकों की सामाजिक स्थिति से संबंधित अध्ययन किया गया है। श्रम कल्याण में श्रमिक के निराकरण में विशेष रूप से सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने की आवश्यकता होती है। कार्यरत श्रमिकों की सुधार कार्य में पेयजल एवं सफाई व्यवस्था की दृष्टि से प्रचलित श्रम की स्वतंत्रता के प्रबल पक्षधर रहा हैं। श्रमिक को मजदूरी और कार्यस्थल पर कार्य करने से सामाजिक सुरक्षा से मुक्ति दिलाने का प्रयास किया गया है। अलीराजपुर जिले में अनुसूचित जनजाति की कुल जनसंख्या 89.98 प्रतिशत है जो जिले में सबसे अधिक निवास करती हैं जिसमें से पुरूष 88.77 प्रतिशत तथा महिला 89.18 प्रतिशत है। गिट्टी की खदान में कार्यरत श्रमिक को कार्य के प्रति सुरक्षा पर अधिकार है परन्तु जनजाति श्रमिक अशिक्षित होने के कारण जानकारी प्राप्त नहीं होती है जिसके कारण श्रमिक सामाजिक अधिकार से वंचित रह जाते है। खदान में श्रमिक अशिक्षित होने के कारण अपने अधिकार के प्रति आवाज नहीं उठा सकते हैं, श्रमिकों को सही समय पर सामाजिक व्यवस्था के लिए खदान मालिक द्वारा प्रतिदिन सफाई व्यवस्था पर ध्यान दिया जाता है। गिट्टी की खदान में कार्यरत श्रमिकों के सवैंधानिक प्रावधान को सुरक्षा से संबंधित अधिकार मिलना चाहिए, खदान में कार्यरत श्रमिकों की सामाजिक स्थिति को मुख्य धारा से जोड़ा जाये।

कुँजी शब्द :– श्रमिकों की सामाजिक स्थिति, सवैंधानिक प्रावधान (श्रमिक की सुरक्षा से संबंधित), जनजाति श्रमिक।

प्रस्तावना :– मनुष्य एक प्रगतिशील सामाजिक प्राणी है जो सदैव कार्य करने के प्रति आगे बढ़ता है। गिट्टी की खदान मे श्रमिक कार्य करके सामाजिक जीवन में परिवर्तन करते हैं जनजाति समाज को इस स्थिति तक पहुँचने के लिए कार्य करना पड़ता है। भारतीय समाज में श्रमिकों को विशेष स्थान दिया गया है लेकिन जनजाति समाज के लोगों को पथ–प्रदर्शन एवं जीवन के मुख्य उद्देश्य के मोक्ष प्राप्ति का साधन माना जाता है। किसी श्रमिक को उसकी इच्छा के विरूद्ध कार्यस्थल में कार्य करवाना उसे गुलाम बनाने से कम नहीं है। व्यक्ति के लिये स्वतंत्रता का अधिकार यदि ईश्वरी अधिकार हैं तो श्रमिक के लिये सामाजिक सुरक्षा का अधिकार भी ईश्वरीय अधिकार है। समाज के समुदाय अपने कार्य से वंचित थे तथा श्रमिक अपने समाज से बहुत पीछे चले गए थे। तब **"डॉ. बी. आर. अम्बेडकर**[1] ने विचार प्रकट किया है कि सरकार चाहे की श्रमिकों को जीवन–यापन योग्य वेतन मिले, रोजगार की अच्छी शर्तें और सामान्य कल्याण सुविधाएं हो जिससे श्रम कल्याण को जारी रखा जा सकें। उन्होंने सरकार की सामान्य नीति का जिक्र किया की खदान में कार्यरत श्रमिक के कल्याण का खर्च उठाना चाहिए।"

गिट्टी की खदान से जनजाति समुदाय को रोजगार प्राप्त हो रहा है उसे आमतौर पर समाज के लोगों को भारत के श्रम में सुधार के प्रस्ताव पर विचार प्रकट किया गया है। अलीराजपुर जिले में गिट्टी की खदान में कार्यरत श्रमिकों की सामाजिक दशाएँ, प्रकृति व स्वरूप पर आधारित है। गिट्टी की खदान शहर से दूर पहाड़ी क्षेत्र में स्थापित होती है कार्यस्थल में अनुसूचित जनजाति समूह के श्रमिक कार्य करते हैं। खदान में कार्यरत जनजाति श्रमिक सामाजिक, दृष्टि से अत्यन्त पिछड़े है तथा श्रमिक सामाजिक रूप से मजदूरी और दैनिक वेतन भोगी मजदूर के रूप में कार्य करते हैं। अनुसूचित जनजाति सामाजिक रूप से पिछड़ी जनजाति कहलाती है श्रमिकों की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं होने के कारण श्रमिक गिट्टी की खदान में मजदूरी करते हैं। **बी. के दुबे का विचार (1996)**[2] में जनजाति समाज प्रारंभ से ही दूसरे समाज से दूर तथा प्रकृति के करीब रहा है तथा दुर्गम और पिछड़े क्षेत्र में रहने के कारण जनजातियों का

जीवन आज भी काफी पिछड़ा हुआ है। इसी कारण जनजाति शब्द का प्रयोग किया गया है।"

अनुसूचित जनजाति समुदायों में भील, भीलाला, मुंडा, गोंड, सहरिया, मीणा आदि है। जनगणना 2011 के अनुसार भारत में अनुसूचित जनजातियाँ लगभग 580 तथा सम्पूर्ण भारत की जनसंख्या 8.6 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र में शोध कार्य के माध्यम से गिट्टी की खदान में कार्यरत जनजाति श्रमिकों की सामाजिक दशा को जानने का प्रयास किया गया है। अध्ययन में मूलभूत आवश्यकता होती है कि ऐसे मूलभूत कारण कौन से है जिससे आदिवासी की सामाजिक स्थिति में सुधार नहीं हो रहा हैं। जिले में जनजाति श्रमिक अशिक्षित होने के कारण समाज में सुधार नहीं हो रहा है तथा इस क्षेत्र में श्रमिकों के सामाजिक स्तर में परिवर्तन लाने के लिए इन जनजाति को शिक्षित किया जाना चाहिए।

अध्ययन का उद्देश्य :– अध्ययन का एक निश्चित उद्देश्य होता है कि शोध कार्य को विभिन्न चरणों में अपने लक्ष्य को ध्यान में रखकर पूर्ण किया जाता है। शोध का मूल उद्देश्य संबंधित समस्याओं का अध्ययन करना एवं उनके निवारण से संबंधित कार्य योजना समाज के समक्ष रखना है। जनजाति समाज में कार्यरत श्रमिकों की सामाजिक स्थिति और संवैधानिक सुरक्षा संबंधित प्रावधान का उल्लेख किया गया है।

अध्ययन का क्षेत्र :– मध्यप्रदेश राज्य का पश्चिमी जिला अलीराजपुर में जनजातियों की जनसंख्या सबसे अधिक पायी जाती है इसलिए इसका शोध अध्ययन किया गया है। इसके साथ ही जिले में अनुसूचित जनजाति श्रमिक गिट्टी की खदान में कार्यरत है। यह जिला कुछ वर्ष पहले झाबुआ जिले से कुछ क्षेत्र को विलग करके एक नया जिला बनाया गया है। अलीराजपुर जिला उत्तर दिशा की ओर झाबुआ–दाहोद के तालाब तक, पश्चिम में शिवराजपुर गुजरात तक, दक्षिण में नर्मदा नदी तक तथा पूर्व में हथिनी नदी के किनारे धोलगढ तक इसका क्षेत्रफल फैला हुआ है। यहाँ पर गाँवों की भौगोलिक स्थिति पर विचार किया जाए तो अधिकतर भूमि पहाड़ी, रेतीली पथरीली, कंकड़ एवं अनुपजाऊ भूमि है। कट्ठिवाड़ा काफी ऊँचाई पर बसे इस गांव में सबसे अधिक वर्षा होती है। यह स्थान सुंदर और स्मणीय गांव विन्ध्य श्रृंखला के तल पर स्थित है झरना बहुत ही सुन्दर पर्यटक, हनुमान मन्दिर, रत्नमाला प्रमुख दर्शनीय स्थल है। भगोरिया अलीराजपुर जिले का मुख्य पर्व है कट्ठिवाड़ा में नुरजहाँ प्रजाति का आम पाँच किलो तक का होता है जो पूरे देश में प्रचलित है। कट्ठिवाड़ा अलीराजपुर तहसील से 45 किलोमीटर दूर उत्तर पश्चिम में स्थित है।

निदर्शन विधि :– अध्ययन क्षेत्र में शोधकार्य को क्रमबद्ध रूप से प्राथमिक और द्वितीयक दोनों प्रकार के ऑकड़ों का प्रयोग किया गया है जिससे प्राथमिक रूप से प्रश्नावली, अनुसूची साक्षात्कार, अवलोकन एवं समूह चर्चा आदि का प्रयोग किया गया है। जिससे शोध अध्ययन में सूक्ष्म, सत्यता का परीक्षण किया जा सके। तथा इसके साथ शोधकार्य को अधिक से अधिक तार्किक ओर वैज्ञानिक बनाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त द्वितीयक ऑकड़ो का प्रयोग शोध कार्य में किया गया है। जिसमें विभिन्न आँकड़ों का संकलन अलग–अलग विद्वानों द्वारा लिखित पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाएँ, जनगणना पुस्तिका, इन्टरनेट आदि को ध्यान में रखते हुए आँकड़ों का संग्रह किया गया है।

गिट्टी की खदान में कार्यरत जनजाति श्रमिक का परिदृश्य :– प्रस्तुत अध्ययन गिट्टी की खदान में कार्यरत जनजाति श्रमिकों की सामाजिक स्थिति संबंधित सुविधाओं का अध्ययन किया गया है। भारतीय परिप्रेक्ष्य मे श्रमिकों पर विशेष ध्यान केन्द्रित करके श्रम कल्याण कोष स्थापित किया जाए। कार्यरत श्रमिक के लिए अनेक प्रकार के सामाजिक कार्य को स्पष्ट किया गया है। कार्यस्थल पर श्रमिक के पेयजल और सफाई की व्यवस्था इत्यादि सुविधा खदान मालिक के द्वारा उपलब्ध है कोई भी अध्ययन विश्लेषण के बिना पूर्ण नहीं हो सकता है। क्योंकि कार्य स्थिति के निर्धारण में सामाजिक पृष्ठ भूमि की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अतः स्पष्ट है कि सामाजिक पक्ष अन्योन्याश्रित घटक होता है।

1. कार्यस्थल पर पेयजल व्यवस्था :– श्रमिकों के स्वस्थ विकास व वृद्धि के लिए स्वच्छता एवं सफाई महत्वपूर्ण है जो भोजन हम ग्रहण करते है, जिस पर्यावरण में हम सांस या ऑक्सीजन लेते हैं उसी प्रकार जल हम सेवन करते हैं। उसकी स्वच्छता भी उत्तम स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। पेयजल मनुष्य के जीवन की सबसे अहम् आवश्यकता है। पानी के बिना व्यक्ति की कल्पना करना ही शून्य के समान है। शोध अध्ययन में पाया गया कि गिट्टी की खदान में श्रमिकों के तथा उनके परिवार के लिए पेयजल की व्यवस्था खदान मालिक द्वारा हेण्ड पंप, ट्यूबवेल के द्वारा की गई है।

कुछ जगह श्रमिक कुँआ का सहारा लेकर पीने के पानी की आवश्यकता की पूर्ति करते है। पेयजल स्वास्थ्य की अनिवार्य आवश्यकता के रूप में मान्य है। परिवार की महत्वपूर्ण आवश्यकता साफ एवं सुरक्षित जल की आपूर्ति है। मनुष्य के स्वास्थ्य का प्रभाव सीधे उसके कार्य पर भी पड़ता है।

तालिका क्रमांक 01
कार्यस्थल पर पेयजल व्यवस्था

क्र.	कार्यस्थल पर पेयजल व्यवस्था	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हेण्ड पंप	159	53
2.	ट्यूबवेल	94	31.3
3.	नल व्यवस्था	0	0
4.	कुँआ / बावड़ी	31	10.4
5.	उपरोक्त सभी	16	5.3
	योग	**300**	**100**

ग्राफ क्रमांक 01 कार्यस्थल पर पेयजल व्यवस्था

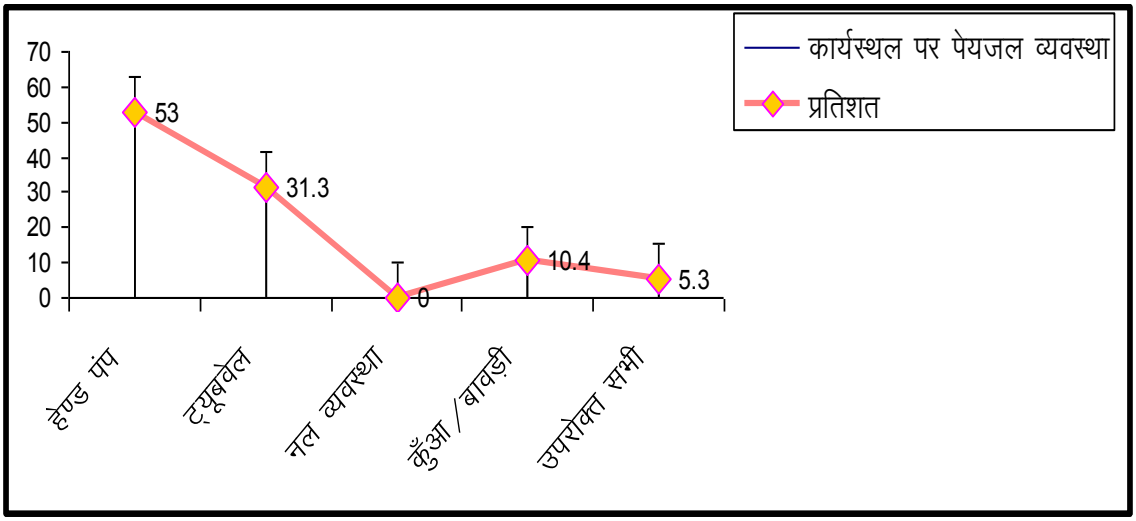

तालिका क्रमांक (01) से स्पष्ट होता है कि 53 प्रतिशत उत्तरदाताओं कार्यक्षेत्र में पीने के पानी के लिए हेण्ड पंप का प्रयोग करते है, 31.3 प्रतिशत उत्तरदाता ट्यूबवेल का पानी का प्रयोग करते है, 10.4 प्रतिशत उत्तरदाता कुँआ व बावड़ी दोनों का पानी पीते है 5.3 प्रतिशत उत्तरदाता हेण्ड पंप, ट्यूबवेल, कुँआ व बावड़ी सभी का पानी पीते है। नल व्यवस्था से पीने का पानी नगण्य है।

अतः निष्कर्ष से स्पष्ट है कि खदान में मुख्य रूप से पेयजल की व्यवस्था हेण्ड पंप 53 प्रतिशत प्रयोग करने वाले अधिक है। सर्वेक्षित क्षेत्र मे कार्यरत श्रमिक के लिए पीने की पानी की व्यवस्था फिलटर वाला होना चाहिए ताकि श्रमिक बीमार होने से बच सकें।

2. खदान में सफाई की व्यवस्था :– गिट्टी की खदान में कार्य का वातावरण और कार्य करने की दशायें वहाँ पर स्वच्छता के उचित प्रबंध पर निर्भर करते हैं। खदानों का वातावरण वैसे भी धूल से भरा होता है यदि खदान में उचित प्रबंध नहीं किया जाएगा तो इसका प्रभाव कार्य के परिणाम पर पड़ता है। कार्यरत स्थल में स्वच्छता का वातावरण ठीक नहीं रहेगा। तो श्रमिकों में कार्य करने के प्रति असंतुष्टि होती है।

तालिका क्रमांक 02
खदान में सफाई की व्यवस्था

क्र.	खदान में सफाई की व्यवस्था	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	प्रतिदिन	227	75.7
2.	दो तीन दिन में एक बार	61	20.3
3.	साप्ताहिक	12	4
4.	कोई व्यवस्था नहीं	0	0
	योग	**300**	**100**

ग्राफ क्रमांक 02 खदान में सफाई की व्यवस्था

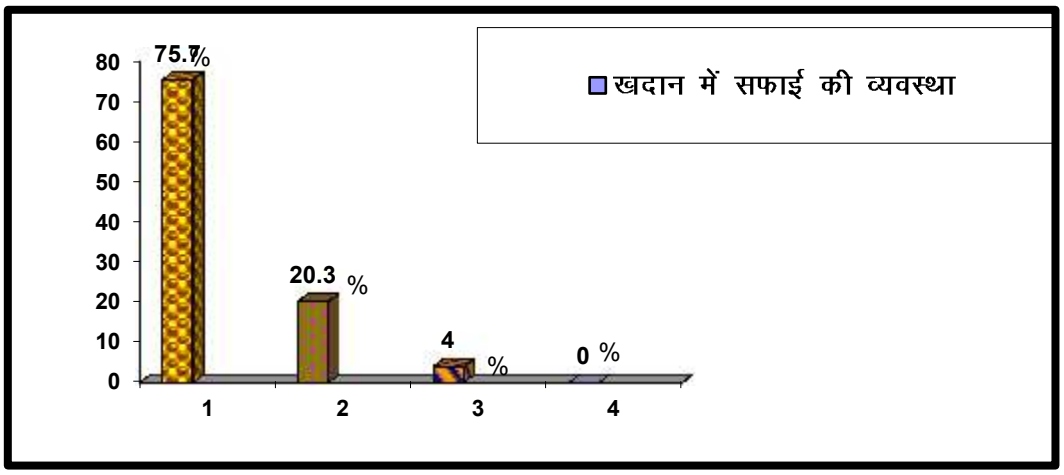

उक्त तालिका क्रमांक (02) के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि चयनित उत्तरदाताओं में 75.7 प्रतिशत श्रमिक के द्वारा कहा गया कि गिट्टी खदान में प्रतिदिन सफाई होती है, 20.3 प्रतिशत श्रमिक का कहना है कि खदान में दो या तीन दिन में एक बार सफाई होती है, 4 प्रतिशत श्रमिक ने कहां की सप्ताह में मात्र एक बार सफाई होती है, सफाई की कोई व्यवस्था नहीं वाले श्रमिक नगण्य है।

अतः निष्कर्ष से स्पष्ट होता है कि गिट्टी की खदान में चयनित श्रमिकों के द्वारा बताया गया कि खदान में प्रतिदिन सफाई व्यवस्था 75.7 प्रतिशत है जो सबसे अधिक है। अध्ययन क्षेत्र में श्रमिक के लिए सफाई व्यवस्था लाभदाय है क्योंकि खदान में प्रतिदिन सफाई की व्यवस्था होने के कारण श्रमिक स्वच्छ रहता है। खदान में उड़ने वाली धूल से बचने के लिए प्रतिदिन पानी का छिड़काव दिन में दो बार होना चाहिए।

निष्कर्ष :– निष्कर्ष से ज्ञात होता है कि अध्ययन क्षेत्र में जनजाति श्रमिक की सामाजिक स्थिति से संबंधित विश्लेषण का अध्ययन किया गया है। खदान में कार्यस्थल पर कार्य करने वाली जनजाति श्रमिक की स्थिति पिछड़ी हुई है। जनजाति पूर्व से ही अन्य प्रकार के कार्य पर आश्रित रहते आये हैं। लेकिन वर्तमान में अधिकांश जनजाति श्रमिक कार्य नहीं मिलने के कारण गिट्टी की खदान में कार्य करके अपने परिवार का पालन–पोषण करते हैं। इसके साथ ही जनजाति अपनी सामाजिक स्थिति को बनाए रखने के लिए भिन्न–भिन्न प्रकार के कार्य करते है। गिट्टी की खदान में खदान मालिक के प्रावधान के तहत सप्ताह में एक दिन अवकाश अवश्य दिया जाता है। वर्तमान समय में कार्यस्थल में कार्यरत श्रमिक के लिए सुविधा प्रदान की जाती है। अध्ययन क्षेत्र में अनुपजाऊ भूमि होने के कारण वहाँ पर गिट्टी की खदान को संचालित किया जाता है। बेरोजगार व्यक्ति को रोजगार मिलता और कार्य करने के लिए गाँव छोड़कर दूसरी जगह नहीं जाना पड़ता हैं। कार्यस्थल पर कार्य करने वाली जनजाति श्रमिक अपने परिवार के साथ ही रहते है

इसके अभाव में श्रमिकों को कार्य करने के लिए अन्य स्थान पर जाने के कारण व्यक्ति को वहीं रहना पड़ता है। जिले में डोलोमाइट पत्थर अधिक मात्रा में उपलब्ध होते हैं। अध्ययन में अधिकांश श्रमिक गिट्टी की खदान में मुख्य रूप से पेयजल की व्यवस्था हेण्ड पंप से 53 प्रतिशत प्रयोग करने वाले अधिक है। अध्ययन क्षेत्र मे कार्यरत श्रमिक के लिए पीने की पानी की व्यवस्था फिलटर वाला होना चाहिए ताकि श्रमिक बीमार होने से बच सकें। गिट्टी की खदान में सर्वेक्षित श्रमिकों के द्वारा बताया गया है कि खदान में प्रतिदिन सफाई व्यवस्था 75.7 प्रतिशत अधिक है। जो कि अध्ययन क्षेत्र में श्रमिक के लिए लाभदाय है क्योंकि खदान में प्रतिदिन सफाई की व्यवस्था होने के कारण श्रमिक स्वच्छ रहता है। खदान में सफाई की व्यवस्था प्रतिदिन और पानी का छिड़काव दिन में दो बार होना चाहिए। वर्तमान समय में कार्यस्थल पर कार्य करने वाले उत्तरदाताओं को कुछ दुर्घटना होने पर चिकित्सा सुविधा खदान मालिक के द्वारा प्रदान की जाती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. मुखर्जी आर. (1972) "सामाजिक सुरक्षा और श्रम कल्याण," सुधा राम मन्दिर कानपुर।
2. उपाध्याय देवेन्द्र, ''असंगठित क्षेत्र में मजदूरों की समस्याएं और सामाजिक सुरक्षा, कुरूक्षेत्र, मई 2003
3. दूबे, बी. के. (1996), ''अ स्टडी ऑफ द ट्राइबल पीपुल्स एण्ड ट्राइबल एरिया ऑफ मध्यप्रदेश'' पब्लिकेशन ट्राइबल रिसर्च एण्ड डेवलपमेंट इन्स्टीच्यूट ऑफ भोपाल।
4. राय, सरोज (1999)–महिला श्रमिक, रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
5. सोडाणी कैलाश (1993), ''असंगठित श्रमिक व श्रम कानून, शिक्षा पब्लिशर्स, उदयपुर
6. चतुर्वेदी एवं डॉ. चतुर्वेदी ''श्रम आन्दोलन तथा श्रमिक संघ'' श्रम अर्थशास्त्र एवं श्रम समस्यायें, गोयल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ
7. तिवारी, शर्मा (1994), ''म.प्र. की जनजातिय समाज एवं व्यवस्था'', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रथ अकादमी, भोपाल 49
8. मुकर्जी रविन्द्रनाथ ''सामाजिक अनुसंधान'' विवेक प्रकाशन, 7– यू. ए. जवाहर नगर, दिल्ली–7 पृ. 266
9. मौर्य सुषमा (2015) ''भतरा जनजाति'' बी. आर. पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन दिल्ली, 110052 पृ. 4–5
10. जटिया, सत्यनारायण (2002) ''बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर '',डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान सामाजिक न्याय और अधिकारिता भारत सरकार 15 जनपथ नई दिल्ली–110001 पृ. 75,76
11. विष्णुदत्त नागर (2014) ''डॉ. आम्बेडकर के आर्थिक विचार और नीतियाँ'', खण्ड दो, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी रवीद्रनाथ ठाकुर मार्ग, बानगंगा, भोपाल–462 003 पृ. 25,26
12. श्रम और श्रमिक कानून, कुरूक्षेत्र, मई 2006 ,पेज नं.103
13. अग्रवाल, डी. एन, (1975) श्रम अर्थशास्त्र, कानपुर, किशोरी पब्लिशिंग, हाऊस
14. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, अलीराजपुर–2011

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

वन संसाधन में बदलाव से जनजातियों में सामाजिक परिवर्तन

बाऊ गोखले
शोधार्थी (अर्थशास्त्र), डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय,
डॉ. अम्बेडकर नगर (महू), जिला इन्दौर, मध्यप्रदेश, भारत

सारांश :– मध्यप्रदेश का पश्चिमी जिला अलीराजपुर में जनजाति अधिकतर ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है। यह समुदाय दूर दराज पहाड़ में बसी हुई है तथा इनकी बसाहट ग्रामीण क्षेत्र में दूर–दूर तक फैली हुई है। जनजाति ठीक वैसे ही जंगल उनके थे और वे जंगल के थे। यह समाज आजीविका के लिए वनों पर आश्रित रहते आये है लेकिन वन संसाधन में बदलाव होने से इनके रहन–सहन, खान–पान एवं रीति–रिवाज में परिवर्तन हुआ हैं। वनों पर शासन द्वारा प्रतिबंध होने के कारण जनजाति अब कृषि की ओर उन्मुख हो रही है। इस क्षेत्र में प्रकाश की सुविधा होने से लोग नई तकनीकी कृषि यंत्र का उपयोग करके फसल की पैदावार में वृद्धि कर रहे हैं जिसके कारण उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होने से समाज में परिवर्तन होना स्वाभाविक हैं। पूर्व में जनजाति अधिकतर जलाऊ लकड़ी का उपयोग भोजन पकाने और मकान बनाने के लिए करते थे। परन्तु वर्तमान में लकड़ी की जगह गैस सिलेण्डर का उपयोग करने लग गये है तथा निवास स्थान के लिए लोग परम्परागत मकान छोड़कर अर्द्धपक्का एवं पक्का मकान बनाकर रहते हैं। इस क्षेत्र में शिक्षा का प्रचार–प्रसार होने के कारण लोग उन्नत समाज की ओर बढ़ रहे है तथा इनको अन्य समाज में भी सम्मान मिलता दिखाई दे रहा है। जिले में रोजगार के अन्य साधन होने के कारण परिवार का पालन–पोषण ठीक से होने लग गया है एवं उनके सामाजिक कार्यक्रम में भी परिवर्तन हुआ है। इस प्रकार से अध्ययन क्षेत्र में वन संसाधन में बदलाव होने से जनजाति समुदाय में सामाजिक परिवर्तन हो रहा है।

कुँजी शब्दों :– वन संसाधन, जनजाति समुदाय, सामाजिक परिवर्तन।

प्रस्तावना :– भारत में अनेक प्रकार की जनजाति निवास करती है। मध्यप्रदेश का पश्चिमी जिला अलीराजपुर गुजरात राज्य की सीमा से लगा हुआ है जो आदिवासी के लिए विख्यात जिला माना जाता है। यहाँ पर भील, भीलाला जनजाति की जनसंख्या सबसे अधिक पाई जाती है इसके पश्चात् अनेक आदिवासी जिले मध्यप्रदेश में सम्मिलित है जैसे– झाबुआ, बड़वानी, शहडोल, बैतूल, पश्चिम निमाड़, छिदवाड़ा, पूर्वी निमाड़ी, रतलाम, धार, मण्डला आदि है। पूर्व में लोग अधिकांश वन संसाधन पर अधिक निर्भर रहते थे तथा वनों से फल–फुल का संग्रहण करके अपना जीवन निर्वाह करते थे। जनजाति समाज के लोग कृषि की ओर ध्यान कम देते थे, क्योंकि कृषि कार्य करने के लिए पर्याप्त मात्रा में संसाधन उपलब्ध नहीं हो पाते थे इस कारण परम्परागत तरीके से कृषि कार्य करते थे। इन क्षेत्र में रहने वाले लोग प्रकाश की व्यवस्था नहीं होने के कारण मिट्टी के तेल उपयोग करते थे। परन्तु वर्तमान में प्रकाश की व्यवस्था होने से इस जिले में मिट्टी का तेल एवं अन्य साधन का उपयोग कम होता जा रहा है।

इस क्षेत्र में बिजली की सुविधा होने से सिंचाई के साधन कृषि क्षेत्र की ओर अधिक उन्मुख हो रहे हैं क्योंकि नई उन्नत किस्म के बीज एवं रासायनिक उर्वरक होने से कृषि की पैदावार में वृद्धि हुई है जिसके कारण इन जनजाति समाज को अन्य समाज में समानता का व्यवहार मिलना शुरू हो गया है। इन समुदाय में धीरे–धीरे शिक्षा का प्रचार–प्रसार होने से इनकी पूर्व की परम्परा को छोड़ रहे है तथा नई परम्परा की ओर बढ़ते जा रहे है। अध्ययन क्षेत्र में इस प्रकार का बदलाव होने से उनकी सामाजिक स्थिति में परिवर्तन हुआ हैं। पूर्व में इनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होने के कारण सही तरह से सामाजिक कार्यक्रम नहीं मना पाते थे। वन के बदलते संसाधन के कारण इनकी सामाजिक–आर्थिक स्थिति में धीरे–धीरे परिवर्तन हो रहा है। जनजाति समुदाय खाना बनाने के लिए अधिकांश लकड़ी का उपयोग करते थे। भारत सरकार के द्वारा दिए जा रहे उज्ज्वला योजना के प्रारम्भ होने से ग्रामीण क्षेत्र में लकड़ी का उपयोग खाना बनाने में कम होता दिखाई देता है।

जिले में अधिकांश अनुसूचित जनजाति समुदाय कच्चे मकान की ओर से पक्के मकान में निवास करते जा रहे हैं। इन जनजाति समाज की सामाजिक स्थिति में बदलाव होने से इनके रहन–सहन एवं भोजन में परिवर्तन हुआ है। इन क्षेत्र में जनजाति

के लिए कृषि संबंधि संसाधन नहीं होने के कारण इनकी स्थिति काफी पिछड़ी हुई थी। लेकिन वन संसाधन में बदलाव होने से जनजाति समुदाय की अर्थव्यवस्था में परिवर्तन हुआ है अनुसूचित जनजाति समुदाय अभी भी पहाड़ी क्षेत्र में निवासरत है। कुछ वर्ष पहले अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई संबंधित संसाधन के अभाव के कारण जनजाति के लोग वनों पर अधिक आश्रित रहते थे। परन्तु वन के बदलते संसाधन से इनकी सामाजिक स्थिति में परिवर्तन हुआ है। वन संसाधन में परिवर्तन होने से जनजाति श्रमिक अन्य कार्य की ओर बढ़ रहे है तथा इनकी सामाजिक समस्याओं से दूर होते जा रहे है। वन संसाधन में बदलाव होने से आदिवासी अपना निजी उद्योग धंधा कर जीवन निर्वाह करने लगे है भील, भीलाला जनजाति सभ्य समाज की ओर बढ़ते जा रहे है। अनुसूचित जनजाति परिवार अनेक प्रकार के कार्य करके उनकी आजीविका में वृद्धि करते हैं। इन जनजाति की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए राज्य सरकार भी कुछ कार्यक्रम को क्रियान्वित करती है ताकि आदिवासी समुदाय मुख्य धारा में शामिल हो सकें।

अध्ययन क्षेत्र में शिक्षा के अभाव के कारण कुछ जनजाति समाज वर्तमान में भी अन्य संसाधन के होते हुए भी संसाधन अविकसित रह जाते है। अलीराजपुर आदिवासी का बाहुल्य क्षेत्र होने के कारण यहाँ पर शिक्षा का प्रचार–प्रसार कम हुआ है इस कारण से पूर्व में अनुसूचित जनजाति के लोग अधिकतर वनों पर निर्भर रहते आये है। जनजाति समाज के सामाजिक कार्यक्रम में बदलाव आया है। **सी. वी. एफ. हेमडार्फ** (1982) ने भारत की आदिवासी जनजाति का अध्ययन करके उनकी धारणाएं को स्पष्ट किया है और उनके द्वारा बताया गया है कि भारतवर्ष में आदिकाल से अलग–अलग क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की जनजातियों का निवास स्थान रहा है।"[1]

अध्ययन का उद्देश्य :– प्रस्तुत अध्ययन में अलीराजपुर जिले की जनजाति में वन संसाधन को शामिल किया गया है इन जनजाति समुदाय के वन संसाधन में बदलाव होने से इनकी सामाजिक स्थिति में परिवर्तन का अध्ययन है।

शोध का क्षेत्र :– शोध का क्षेत्र अलीराजपुर आदिवासी का बाहुल्य जिला है। यहाँ पर अनुसूचित जनजाति अभी भी ज्यादा विकसित साधन भी अविकसित है। जिसका मुख्यः कारण आदिवासी मुख्यधारा से दूर निवास करते हैं। यह जिला मध्यप्रदेश के पश्चिमी भाग में पड़ता है कुछ वर्ष पहले झाबुआ जिले से अलग करके एक जिला बनाया गया है। इस जिले का भौगोलिक क्षेत्रफल 3,182 वर्ग कि.मी. में फैला है और इसका घनत्व 2,29 वर्ग किलोमीटर है। पश्चिम में शिवराजपुर गुजरात तक, उत्तर दिशा की और झाबुआ–दाहोद के तालाब तक, पूर्व में हथिनी नदी के किनारे धोलगढ तक और दक्षिण में नर्मदा नदी तक इसका क्षेत्रफल फैला है। जिले में रेतीली जमीन और ऊँची–नीची पहाड़ियों के कारण यहां के आदिवासी समुदाय सामाजिक विकास में परिवर्तन के लिए अनेक प्रकार के वन संसाधन पर आश्रित रहते आये हैं। जनगणना 2011 के अनुसार जिले की कुल जनजाति जनसंख्या 6,48,638 है कुल जनसंख्या का 88.98 प्रतिशत निवास करती है।

शोध विधि :– शोध अध्ययन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि के आधार पर अलीराजपुर जिले के समस्त तीन तहसील के छः ब्लॉक में से पाँच–पाँच जनजाति गाँव का चयन किया गया। प्रत्येक गांव से कुल 20–20 परिवारों का चयन किया गया है जिसमें से एक ब्लॉक से 100 परिवार का अध्ययन तथा इसी प्रकार संपूर्ण अलीराजपुर जिले से कुल 600 परिवारों का अध्ययन किया गया। शोध विधि प्राथमिक एवं द्वितीयक है। प्राथमिक आंकड़ों के लिए उत्तरदाता से जानकारी प्राप्त की गई है तथा द्वितीयक आंकड़ों में पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाएँ से मार्गदर्शन प्राप्त किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण :– संकलित आँकड़ों को संग्रहित करने के पश्चात् व्यवस्थित ढंग से तालिकाओं के लिए मास्टरशीट एम. एस एक्सेल में तैयार किया गया है। शोध अध्ययन के द्वारा प्राप्त हुए ऑकड़ों का विश्लेषण निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है–

1. **मकान का स्वरूप** :– अध्ययन क्षेत्र में अनुसूचित जनजाति की निवास व्यवस्था स्वयं की है, परंतु कुछ जनजाति झोपड़ी बनाकर ओर कुछ जनजाति परिवार शासन द्वारा दिये गये मकान में निवास करते हैं। शोध अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि जनजाति परिवार कच्चे मकान में निवास करते हैं। जिनकी सामाजिक–आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होने के कारण कृषि के साथ मजदूरी का कार्य भी करते है जो नीचे तालिका में दर्शाया गया है–

तालिका क्रमांक 01
मकान का स्वरूप

क्र.	मकान का स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	कच्चा	269	44.8
2.	पक्का	68	11.3
3.	अर्द्धपक्का	248	41.4
4.	झुग्गी झोंपड़ी	15	2.5
	योग	**600**	**100**

उपरोक्त तालिका क्रमांक (01) से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में कच्चा मकान वाले परिवार 44.8 प्रतिशत है ओर पक्का मकान में निवास करने वाले परिवार 11.3 प्रतिशत है, अर्द्धपक्का मकान में निवास करने वाले परिवार 41.4 प्रतिशत है जबकि झुग्गी झोंपड़ी में निवास करने वाले परिवार 2.5 प्रतिशत है।

अतः सर्वेक्षित क्षेत्र में कच्चा मकान में निवास करने वाले परिवार 44.8 प्रतिशत सर्वाधिक है, परिवार की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं होने के कारण और योजना नहीं मिलने से कच्चे मकान में निवास करते है। जबकि झुग्गी झोंपड़ में निवास करने वाले परिवार 2.5 प्रतिशत है जो सबसे कम है ऐसी स्थिति में सरकार को इन परिवार के लिए मकान उपलब्ध कराना चाहिए। इसके अतिरिक्त मुर्गी पालन, बकरी पालन, पशुपालन आदि योजनाएं दी जानी चाहिए।

2. घर में रोशनी करने का साधन :– वर्तमान समय में अनुसूचित जनजाति परिवार के घर में रोशनी करने के संसाधन में परिवर्तन आ रहा है जिसके कारण इन परिवार के सामाजिक कार्यक्रम या अन्य सभी प्रकार के कृषि कार्य के लिए बिजली की आवश्यकता होती है। व्यक्ति को जिस प्रकार से जीवन जीने के लिए भोजन, हवा पानी, की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार जनजाति क्षेत्र में निवासरत व्यक्ति को अनेक कार्य करने के लिए प्रकाश की व्यवस्था होती है। ताकि कृषि कार्य करने से उनकी आजीविका में परिवर्तन हो सकें। इसी कारण बिजली की आवश्यकता होती है। वर्तमान समय में बिजली की आवश्यकता बढ़ती जा रही है तथा मिट्टी का तेल कम उपयोग हो रहा है।

तालिका क्रमांक 02
घर में रोशनी करने का साधन

क्र.	रोशनी करने का साधन	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	बिजली	468	78
2.	मिट्टी का तेल	96	16
3.	गोबर गैस	0	0
4.	अन्य	36	6
	योग	**600**	**100**

तालिका क्रमांक (02) का अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में 78 प्रतिशत उत्तरदाता के घर में रोशनी करने का साधन बिजली है, 16 प्रतिशत उत्तरदाता के घर में मिट्टी का तेल प्रकाश के लिए उपयोग करते है, शून्य प्रतिशत उत्तरदाता गोबर गैस है जबकि 6 प्रतिशत उत्तरदाता अन्य प्रकार की प्रकाश व्यवस्था करते है।

अतः सर्वेक्षित क्षेत्र में उत्तरदाता बिजली का उपयोग घर में रोशनी करने वाले 78 प्रतिशत सबसे अधिक है, क्योंकि वर्तमान समय में प्रत्येक गाँव में बिजली उपलब्ध होने के कारण इसका महत्व बढ़ता जा रहा है, परन्तु अनुसूचित जनजाति की आर्थिक स्थिति को देखते हुए बिजली बिल दर में कमी करना चाहिए। 16 प्रतिशत उत्तरदाता के घर में वर्तमान में मिट्टी का तेल प्रकाश के लिए उपयोग करते है जिन उत्तरदाता के घर में बिजली की सुविधा नहीं हैं, उनके घर में बिजली उपलब्ध की जानी चाहिए।

3. खाना बनाने का साधन – अध्ययन क्षेत्र में पूर्व से ही खाना बनाने के लिए जलाऊ लकड़ी का उपयोग होता आया है लेकिन भारत सरकार के द्वारा उज्ज्वला योजना आने से अनुसूचित जनजाति क्षेत्र में लकड़ी ओर गैस सिलेण्डर का उपयोग खाना बनाने के लिए करते है।

तालिका क्रमांक 03
खाना बनाने का साधन

क्र.	खाना बनाने का साधन	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	लकड़ी	496	82.7
2.	कोयला	17	2.8
3.	गोबर गैस	0	0
4.	गैस सिलेण्डर	87	14.5
	योग	**600**	**100**

तालिका क्रमांक (03) का विश्लेषण करने से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययनित क्षेत्र में 82.7 प्रतिशत उत्तरदाता खाना बनाने के लिए लकड़ी का उपयोग करते है, 2.8 प्रतिशत उत्तरदाता कोयला का उपयोग करते है, गोबर गैस वाले नगण्य पाये गये है, और गैस सिलेण्डर का उपयोग करने वाले 14.5 प्रतिशत है।

अतः इस प्रकार कहा जा सकता है कि अध्ययन क्षेत्र में 82.7 प्रतिशत उत्तरदाता लकड़ी का उपयोग खाना बनाने के लिए करते है जो सबसे अधिक है लकड़ी ग्रामीण क्षेत्र में आसानी से मिल जाती है इसलिए इसका उपयोग अधिक करते है। जिले में उज्ज्वला योजना आने के कारण लकड़ी ओर गैस सिलेण्डर का उपयोग है।

निष्कर्ष :– उपर्युक्त अध्ययन के विश्लेषण से स्पष्ट है कि मध्यप्रदेश की अनुसूचित जनजातियों को मुख्य धारा में जोड़ा जाए। जिले में निवासरत जनजाति समुदाय सामाजिक सभ्यता एवं परम्परा की अमिट पहचान है। अनुसूचित जनजाति के सामाजिक स्तर में परिवर्तन लाना है तो उसके सामाजिक विकास के लिए अनेक प्रकार के संसाधन पर ध्यान दिया जाना चाहिए। अध्ययन क्षेत्र में जनजाति समुदाय में बदलते वन संसाधन से उनकी सामाजिक स्थिति में बदलाव हुआ है। अनुसूचित जनजाति समाज के प्रत्येक व्यक्ति के कार्य करने की दशा में बदलाव होने से उनकी आजीविका में भी परिवर्तन देखा गया है जिसका विश्लेषण शोध अध्ययन के पश्चात् किया गया है। अलीराजपुर जिले में भील–भीलाला जनजाति अधिक निवासरत है यह अनुसूचित जनजाति शिक्षा के अभाव के कारण संसाधन से अपरिचित रहती हैं जिसके कारण इनको समय पर अनेक प्रकार की योजना नहीं मिल पाती है। जिले में जनजाति समुदाय का निवास स्थान ऊँची–नीची पहाड़ी के कारण यहां की आदिवासी समाज सामाजिक स्थिति में परिवर्तन के लिए अन्य संसाधन पर आश्रित रहते हैं। जनजाति समाज वन के अतिरिक्त कृषि संसाधन की ओर बढ़ते जा रहे है। अध्ययन क्षेत्र में वन के बदलते संसाधन के कारण अनुसूचित जनजाति की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन हुआ है जिससे जनजाति के लोग में जीविकापार्जन के साधन में वृद्धि हुई है। शोध अध्ययन क्षेत्र में कच्चे मकान में निवास करने वाले अनुसूचित जनजाति के परिवार 44.8 प्रतिशत सबसे अधिक है इन जनजाति परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण एवं समय पर सरकारी योजना नहीं मिलने से कच्चे मकान में निवास करते हैं। अतः उत्तरदाता बिजली का उपयोग घर में रोशनी करने वाले 78 प्रतिशत सर्वाधिक पाये गये है, क्योंकि वर्तमान समय में प्रत्येक गाँव में बिजली उपलब्ध होने के कारण बिजली का उपयोग बढ़ता जा रहा है जनजाति की आर्थिक स्थिति को देखते हुए बिजली बिल दर में कमी करना तथा ग्रामीण क्षेत्र में समय पर बिजली प्राप्त होनी चाहिए। अध्ययन क्षेत्र में अनुसूचित जनजाति 82.7 प्रतिशत उत्तरदाता भोजन बनाने के लिए लकड़ी का उपयोग करते हैं। तथा इस क्षेत्र में उज्ज्वला योजना आने से जनजाति लकड़ी के साथ गैस सिलेण्डर का उपयोग करते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. प्रसाद, एन. (1961), भारतीय समाज में जनजातियाँ, बिहार जनजातीय शोध संस्थान, बिहार सरकार, राँची, पृ. संख्या 9
2. उपाध्याय, विजय शंकर, गया पाण्डेय (2002), जनजातीय विकास" मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी रविन्द्रनाथ ठाकुर मार्ग बाणगंगा, भोपाल–462003
3. प्रसाद, राम (1990), मध्यप्रदेश लघुवनोपज शोध की आवश्यकता, इंडियन फॉरेस्ट, नई दिल्ली।
4. हेमडार्फ, सी. वी. एफ. (1982), ''भारत की आदिवासी '' ऑक्सफोर्ड यूनिर्वसिटी, लंदन।
5. मुखर्जी रवीन्द्रनाथ (2000), ''सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी'' विवेक प्रकाशन जवाहर नगर दिल्ली
6. लवानिया एम.एन. जैनी शशी (2007), ''भारत में जनजातीयों का समाजशास्त्र'' रिसर्च पब्लिकेशन, त्रिपोलिया, जयपुर पृ. क्र. 131
7. सिंह हरिनाथ (2016), ''प्राकृतिक संसाधन संरक्षण एवं सुस्थिर विकास'' ए. जे. बुक्स बी–46 ए, नंदग्राम गाजियाबाद–201 003 (यू. पी.)
8. प्रसाद, गोविन्द, गीतांजली एवं कुमार, प्रमोद (2007), 'जनसंख्या संसाधन एवं सामाजिक–आर्थिक रूपान्तरण'' डिस्कवरी पब्लिशिंग हाऊस 483/24 अन्सारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली 110002।
9. गुप्ता, मन्जू (2003), ''जनजातियों का सामाजिक–आर्थिक उत्थान'' अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
10. अटल योगेश एवं सिसोदिया, यतिन्द्रसिंह (2011), आदिवासी भारत एक सामाजिक, सांस्कृति एवं विकासात्मक विवेचन रावत पब्लिकेशन्स जयपुर।
11. कुमार, प्रमीला (2002),'' मध्यप्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन'' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल
12. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, अलीराजपुर–2011

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

मध्यप्रदेश के विरासत (1956–1961)

वीरेन्द्र कुमार झारिया
शोधार्थी, (इतिहास) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

प्रस्तावना :– 1 नवम्बर 1956 को मध्य प्रदेश राज्य बनने के पूर्व यह भू–भाग मध्य भारतः विन्धय प्रदेश, भोपाल राज्य और पुराने मध्य प्रदेश (सी.पी.एण्ड.वरार) के तौर पर प्रशासित रहा। इस दौर में औद्योगीकरण की स्थिति कुछ इस प्रकार थी–

मध्य भारत राज्य अपने समय में कपड़ा मिलों के साथ–साथ स्टील, फर्नीचर आदि उद्योगों के लिए पहचाना जाता था। उस समय मुंबई के बाद मध्य भारत से ही सबसे ज्यादा सूती मिले थी। ग्वालियर का इंजीनियरिंग वर्क्स मध्य भारत का सबसे बड़ा कारखाना था। इसमें सिंधिया स्टेट रेल्वे के इंजन डिब्बों और माल के डिब्बों की मरम्मत के साथ कृषि यंत्र विविध प्रकार के औजार लोहे और पीतल की ढालने का काम तथा फर्नीचर तैयार होता है। यहॉ लगभग 400 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त था।[1]

इंदौर का भड़ारी आयरन एण्ड स्टील का कारखाना तेल निकालने के यंत्र गन्ने का रस निकालने की चरखी आदि वस्तु बानाता था। यहॉ 300 लोगों को रोजगार मिलता था। देवास, इण्डस्ट्रियल इंजीनियरिंग कारखाने में अनेक प्रकार की मशीनों के औजार पुर्जे आदि और इंदौर के ओरियंटल साईंस एवरेंट्स वर्कशॉप में विज्ञान के यंत्र बनाए जाते थे। ग्वालियर व इदौर का पॉटरीज कारखाना ग्वालियर की लैदर फैक्ट्री, ग्वालियर तथा इंदौर में वनस्पति घी उत्पादन के कारखाने राजगढ़ में साबुन बनाने का कारखाना, ग्वालियर और राऊ में कांच के कारखाने ग्वालियर में मैस फैक्ट्री सहित मध्य भारत में कई उद्योग काम कर रहें थे। ग्वालियर के पास बानमोर में सीमेंट बनाने का कारखाना था, जहॉ हर साल 60 हजार टन सीमेन्ट तैयार होता था।[2]

इनमें से तीन कारखाना अधिनियम 1948 के अंतर्गत खोले गए थे। काटन टेक्स इंदौर, इंदौर के मालवा यूनाइटेड मिल्स लिमिटेड, हुकुमचंद मिल्स–लिमिटेड दी कल्याण मिल्स लिमिटेड दी राजकुमार मिल्स लिमिटेड नंदलाल भण्डारी मिल्स लिमिटेड, राय बहादुर कन्हैया लाल भण्डारी मिल्स लिमिटेड स्वदेशी कॉटन एण्ड फ्लोर मिल्स लिमिटेड इंदौर की प्रमुख कपड़ा मिलें थीं।[4]

विंध्य प्रदेश :– विंध्य प्रदेश में खेती के अलावा दूसरा प्रमुख उद्योग जंगल में काम करने का था। लकड़ी काटने का कार्य अधिकतर अनसूचित जाति के लोग करते थे। कुछ लोग शराब की भट्टियों, रोलिंग मिल बीड़ी तेल मिल चावल–मिल छापेखाने, साबुन, मिटटी के वर्तन, आटा चक्की लोहा–फौलाद के कारखानों में संलग्न थे।

पुराना मध्य प्रदेश (सी.पी.एण्ड बारार) स्वतंत्रता के बाद इस राज्य में सूती कपड़ा उद्योग, सीमेंट उद्योग, कागज उद्योग, शीशा उद्योग, जनरल इंजीनियरिंग व इलेक्ट्रिकल, इंजीनियरिंग तथा शाराब पेन्ट वार्निश और फल–संरक्षण उद्योग विशेष उल्लेखनीय थे। राज्य में अनेक कुटीर व लघु उद्योग भी चल रहे थें।

सूती कपड़े का उद्योग पुराने मध्य प्रदेश का सबसे प्रमुख उद्योग माना जाता था। यहॉ इस उद्योग के पनपने का सबसे बड़ा कारण राज्य के विस्तृत कपास क्षेत्र थे। मध्य प्रदेश का दूसरा प्रमुख उद्योग सीमेंट उद्योग था। भारत में इस उद्योग का पूर्णतः प्रादुर्भाव सन् 1912 में हुआ और तत्पश्चात् सन् 1914 में ही मध्य प्रदेश में कटनी सीमेंट एण्ड इंड़स्ट्रियल कम्पनी की स्थापना हुई। इस समय समस्त देश में सीमेंट उद्योग की केवल तीन ही इकाईयॉ थी जिनमें से उपर्युक्त एक इकाई राज्य में थी। जबलपुर जिला में स्थित एसोसिएटेड सीमेंट कंपनी का कारखाना देश में सीमेंट का सबसे बड़ा कारखाना माना जाता है।[5]

भोपाल राज्य :– कृषि प्रधान राज्य होने के बाद भी भोपाल राज्य के दौरान औद्योगिक क्षेत्र में सराहनीय प्रगति हुई। भोपाल में स्थित कपड़ा शक्कर, पुट्ठा, माचिस, कॉच, रूई, औठना, तेल आदि के बड़े–बड़े कारखानों से हजारों श्रमिकों को रोजगार प्राप्त होता था। नए उद्योगों को हर प्रकार की सुविधाए दी जाती थी। इससे यहाँ फ्लोर मिल पेन्टस–वार्निश स्टील, टिरोलिंग साइकिल के पार्टस सेनेटरी–वेयर आदि के कारखाने भी खुलें खादी की बुनाई, लकड़ी के खिलौने व कंघियॉ, फर्नीचर तथा लकड़ी का अन्य काम यहॉ के प्रमुख गृह उद्योग थे।

राज्य में नेपा नगर मिल्स पूर्व निमाड़ जिला (अब बुरहानपुर जिला) नामक कागज का कारखाना था।

नेपा मिल्स का उत्पादन कार्य जनवरी 1955 से प्रारंभ हो गया था। कागज का उत्पादन करने वाली यह भारत की एक मात्र एवं प्रथम मिल थी। इस समय जबलपुर में शीशे के कारखाने चल रहे थे।

मध्य प्रदेश अतीत की तरह मुख्य तौर पर कृषि पर अधारित राज्य है। लेकिन औद्योगिक विकास राज्य की अर्थ व्यवस्था में विविधीकरण के लिए जरूरी है। राज्य में ग्रामोद्योगों की खासी भूमिका है। कृषि के बाद राज्य की अर्थ व्यवस्था ग्रामाद्योगों के कांधे पर आ जाती है। राज्य में बड़े उद्योगों की स्थापना की दिशा में सरकार बाहरी निवेश को बढ़वा दे रही है तथा बाहरी औद्योगिक इकाइयों को राज्य में विकास के लिए अनुकूल वातावरण मुहैया कराने की नीति पर चल रही है। आज मध्य प्रदेश की इंदौर, पीथमपुर भोपाल मण्डीदीप, ग्वालियर, मालनपुर और उसके समीपवर्ती औद्योगिक क्षेत्र प्रमुख उद्योग केन्द्रों के तौर पर उभर रहे हैं। राज्य के अन्य स्थानों पर भी औद्योगीकरण का सिल–सिला तेजी से चल रहा है।

मध्यप्रदेश के विकास कार्य :–

औद्योगिक नीति 1956 – 1946 के औद्योगिक नीति प्रस्ताव के स्थाान पर एक नया औद्योगिक प्रस्ताव 1956 30 अप्रैल 1956 को स्वीकृत किया गया 1948 की सामाजिक स्थिति में काफी फर्क आ चुका था। आधार भूत सामाजिक एवं आर्थिक नीतियों के रूप में समाज वादी ढंग के समाज की धारणा जनता के बीच प्रबल स्वीकृत पाकर संसद में भी मान्यता पा चुकि थी। सन् 1956 की औद्योगिक नीति में उद्योगों के लिए कई सुझाव दिये गये थे उन सुझावों का पालन करते हुए मध्य प्रदेश एक विकास शील राज्यों की श्रेणी में आ पाया है।

मध्य प्रदेश विरासत :–

1. **भारत हेवी इलेक्ट्रीकल लिमिटेड़ भोपाल** :– इस कारखाने को भोपाल में सन् 1960 में ब्रिटेन के एक कारखाने की मदद से सार्वजनिक क्षेत्र में बिजली का भारी सामान बनाने के लिए स्थापित किया गया था। भारत हैवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड. की भोपाल इकाई को देश में विद्युत उपकरणों के उत्पादन में अग्रेणी भूमिका एवं प्रथम स्थापन पाने का गौरव प्राप्त है यह संस्था निरंतर कई वर्षो से विद्युत उपकरणों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कार्य करती है। अन्य आधार भूत परियोजनाओं से सम्बन्धित संयत्रों एवं सेवाओं के क्षेत्र में अपना निरन्तर योगदान देता आ रहा है। इस संस्थान में निर्मित किये जा रहें उत्पादों में सभी प्रकार एवं क्षमता के जल टर्वाइन एवं जनरेटर विभिन्न प्रकार के हीट एक्सचेंजर पावर, ट्रासफर्मर, स्विचगियर, कन्ट्रोल गियर, औद्योगिक, रेक्ट्री फायर, पावर केयेसिटर, रेल इंजनों हेतु संकर्षण मीटरे एवं कट्रोल उपकरण, डीजल जनरेटिंग सेट, तथा विभिन्न उद्योगों हेतु माध्यम व उच्च क्षमता वाली विद्युत मोटरे तथा सैन्य क्षेत्र हेतु विशेष उपकरण प्रमुख है। ताप–एवं जल विधुत की पुरानी इकाइयों के आधुनिकीकरण, एवं नवीनीकरण के क्षेत्र में भी भेल भोपाल को विशेषज्ञता प्राप्त है तथा इस प्रकार क्षेत्र में योगदान भी निरन्तर विकास की ओर है।

ताप एवं विद्युत की पुरानी इकाइयों के आधुनिकीकरण,एव नवीनीकरण के क्षेत्र में भी भेल–भोपाल को विशेष दक्षज्ञता हासिल है ये भारत के नवरत्नो में से एक कम्पनी है। इसका मध्य प्रदेश के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है।[8]

2. **नेपा नगर कागज उद्योग** – 1948–49 में नेशनल न्यूज प्रिंट एण्ड पेपर मिल नेपानगर जिला बुरहानपुर की स्थापना मध्य प्रदेश राज्य में किया गया यहां अखवारी कागज का निर्माण किया जाता है। इस पेपर मिल से लगभग एक वर्ष में 88 हजार मीट्रिक टन अखवारी कागज का निर्माण किया जाता है यह पूरी तहर कार्य 1956–1957 के बीच में कार्य करना शुरू किया और अब इसकी उत्पादन क्षमता को और वृद्धि करने के लिए मध्य प्रदेश सरकार अखबारी कागज विदेशों से आयात नही करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त राज्य में और कई कागज उद्योग स्थापित किये गये है। जैसे अमलई का कागज उद्योग शहडोल, इसके अलावा कागज का निर्माण अन्य स्थानों में भी किया जाता है। भोपाल, रतलाम, ग्वालियर इन्दौर होशंगाबाद में कागज का निर्माण किया जाता है। उन उद्योगों के लिए कच्चे माल जैसे बॉस, रीवा, सीधी, मण्डला, बालाघाट तथा अब छत्तीसगढ़ में जा चुके कुछ जिले, बिलासपुर,सरगुजा, तथा रायगढ़ से बांस प्राप्त होता है इस कारखाने को बुढ़ार खदान् से (सोहागपुर) कोयला क्षेत्र से कोयला दिया जाता है। इस कारखाने में 90 प्रतिशत पुस्तक छपने योग्य कागज बनता है। कागज उद्योग ने प्रदशे के वनों के उत्पादन का

समुचित उपयोग किया है। जिसमें न केवल राज्य की अर्थव्यवस्था को सहारा मिला है बल्कि रोजगार में भी बढोत्तरी हुई है।[9]

3. **भिलाई स्टील प्लांट** :– भारत और यू.एस.ए के सहयोग से 1955 में बना भिलाई स्टील प्लांट म.प्र. के मुख्यमंत्री पं. रवि शंकर शुक्ल के कर कमलों से स्थापित किया गया। भिलाई में एकीकृत लौह और इस्पात कार्यो की स्थापना के लिए जाना जाता है। जब स्थापित किया गया तो एक मिलियन टन स्टील पिंड की कार्य क्षमता प्रांरभिक दौर में करने हेतु हस्ताक्षर किया गया था। यह कारखाना भिलाई में स्थापित करने का मुख्य आधार था 100 किमी,दूर दल्ली राजहर में लौह अयस्क की उपलब्धता थी नंदिनी से चुना पत्थर यह संयंत्र से करीब 25 कि.मी. और लभगम 140 कि.मी दूर हिररी में डोलेामाइट था। 4 फरवरी 1959 को भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ.राजेन्द्र प्रसाद द्वारा पहली विस्फोट भररी के उद्घाटन के साथ शुरू किया गया। 1967 में यह संयंत्र को 2.5 मिलियन टन तक बढा दिया गया था। 1988 में एम.टी का विस्तार पूरा हो गया था। 4 चरण में मुख्य फोकस निरन्तर कांसटिग इकाई और प्लेट मिल यहॉ पर इस्पात कास्टिग और आकार देने की एक नई तकनीक थी। भिलाई इस्पात संयंत्र भारतीय रेल्वे ट्रैक का सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता है। इसमें दुनिया में 260 मीटर का सबसे लंबा रेल्वे ट्रैक बनाने का रिकार्ड है। प्रधान मंत्री के ट्राफी के विजेता कुल 11 बार भिलाई इस्पात संपंत्र आधुनिकीकरण और नई परियोजनाओं के माध्यम से इस्पात उत्पादन की अपनी क्षमता बढ़ा रहा है। यह परियोजना 17.000 करोड़ रूपये की परियोजना भीलई स्टील प्लांट (बी.एस.पी) इन संयंत्र के ब्लास्ट फर्नेस (बी.एफ) संख्या 8 महीने में शुरू हुई है। महामाया को चालू करने की दिशा में ये पहला कदम है इससे मध्य प्रदेश की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। जिसमें 4060 घन मीटर की उपयोगी मात्रा और 8030 टन गर्म धातु प्रति दिन में 2.8 मिलियन टन प्रतिवर्ष उत्पादन करने की क्षमता है। नई फर्नेस ऑनस्ट्री के साख्य, सेल बीएसपी के गर्म धातु क्षमता प्रतिवर्ष 5 मिलियन टन के मौजुदा उत्पादन अंतर से 7.5 मिलियन टन प्रतिवर्ष तक बढ़ाने का प्रयास किया गया है।7

निष्कर्ष :– मध्यप्रदेश में 1956 से 1961 के बीच में जो विकास कार्य किये गये है वो मध्यप्रदेश के विरासत के श्रेणी में गिने जाते है। उनकी जानकारी मध्यप्रदेश के विभिन्न संग्रहलाय एवं पुस्तकालयों में देखने को मिलते है जहां विभिन्न जानकारी प्रस्तुत किये गये है। मध्य प्रदेश के गौरव शाली अतीत को जन साधारण के समक्ष सुनियोजित रूप से प्रस्तुत करने के उद्देश्य से इस संग्रहालय में जीवाश्म प्रागैतिहासिक, प्रतिमा, उत्खन्न, अभिलेख, मुद्रा पेंटिंग चित्राकंत, छाया चित्र, पाण्डुलिपि, वस्त्र, धातु, प्रतिमा, आभूषण, विशेष, प्रदर्शनी तथा स्वतंत्रता संग्राम आदि कला दीर्धाओं के रूप में वर्गीकृत कर प्रदर्शित किया गया है। इस संग्रहालय भवन में लगभग 16 दीर्घाओं में पुरातन महत्व की सामग्री, शिल्प तथा ऐतिहासिक पुरासम्पदाओं का प्रदर्शन किया गया। संरक्षित पुरासामग्री के लिए राज्य संग्रहालय में विशेष स्थान का प्रावधान है। संग्रहालय में प्रदेश के लगभग 5000 पुरावशेषों का प्रदर्शन काल कम अनुसार किया गया है। इनमें से एक ऑटोग्राफ गैलरी में विभिन्न विधाओं की कई महान हस्तियों के कुछ दुर्लभ पन्नो एवं हस्ताक्षरों का प्रदर्शन किया गया है। राज्य संग्रहालय की इस गैलरी में दुर्लभ सामग्री को देखना महत्वपूर्ण पल के समान होता है। राज्य संग्रहालय की इस गैलरी में धर्माचार्या, समाज सुधारक, राज नेता इतिहास कार, साहित्यकार, कलाकार, आदि शामिल है। इस संग्रहालय में मध्यप्रदेश के विकास से संबधित महत्वपूर्ण जानकारी प्रस्तुत की गई जो शोधार्थीओं के लिए महत्वपूर्ण जानकारी प्रस्तुत करने में सहयोग प्रदान करता है।

सन्दर्भ सूची :–

1. मध्य प्रदेश सामान्य ज्ञान जितेन्द्र सिह भदोरिया पृ. 81
2. मध्य प्रदेश एक समग्र मध्ययन महेश कुमार वर्णवाल पृ51
3. मध्य प्रदेश अतीत और आज, वही पृ432.433
4. मध्य प्रदेश सामान्य ज्ञान मुकेश महेश्वरी पृ.405
5. मध्य प्रदेश अतीत और आज वही. पृ.401,402
6. मध्य प्रदेश एक परिचय श्रीकांत जोशी पृ.351
7. मध्य प्रदेश एक समग्र अध्ययन वही. पृ.204–205
8. मध्य प्रदेश अतीत और आज वही. पृ.310
9. मध्य प्रदेश एक परिचय राकेश गौतम पृ.4.2,4.3

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

जीविकोपार्जने संस्कृत भाषायाः महत्त्वम्

डॉ. विभा कुमारी
साहित्य विभाग, का.सिं.द.सं.वि.वि., दरभंगा

संस्कृतभाषा भारतीयानामनुपमक्षयं पैत्रिकं धनम्। यावदेतद् धनं भारतमधिकरोति न जगति कोऽपि देशस्तावद् देशमिमं ज्ञानेऽधरीकर्तु प्रभविष्णुः। एतस्यां भाषायां तज्ज्ञानं विभ्राजते यत्सदृशं न पूतम्। तल्लब्ध्वा परा शान्तिरासाद्यते तद्द्वारेण सर्वेऽपि संशया उच्छिÂतां हृदय–ग्रन्थश्च भिन्नतां ब्रजन्ति। तत् सर्वाण्यपि कर्माणि दग्धुं क्षमते तच्चानन्तमभ्युदयविधायकं सातमहर्निशमजस्रं वर्षति। जगत् तदीयमेव विधं ज्ञानं वेदोपनिषद–दर्शनगीता–रामायण– श्रीमद्भागवतादिभ्यो ग्रन्थ– निर्झरेभ्योऽनायासेनैव पातुं प्रभवति।

संस्कृतभाषायां यथाध्यात्मिकं ज्ञानं विपुलं तथैवाधिभौतिकमपि ज्ञानं प्रचुरम्। लाकेऽर्थमन्तरेण जीवनं व्यर्थम्। दुःखानां शकटमेव तन्मतम्। तस्यार्थस्य केन प्रकारेण समुपार्जनं कार्यं केन विधिना स रक्षणीयो वर्धनीयश्चेत्येतद् विषयाणां प्रतिपादनकारिणो ग्रन्था अपि समुपलब्धाः (न दुर्लभाः)। लोकद्वयष्ट्यार्थस्य प्रयोजनमस्ति कामानामुपभोगः। भाषायामस्यां तमपि काम विषयमधिकृत्य ग्रन्था वर्तन्ते। अर्थकामौ धर्मेण निर्दोषौ भूत्वा द्रढीयसीं स्थिति लभेते। भाषायामस्यां धर्मविषयका ग्रंथाः सन्ति पुस्कलाः। तस्मात् भाषेयमैहलौकिकपारलौकिककल्याण– सम्पादयित्रीत्यत्रा न कापि संशीतिः।[1]

संस्कृतभाषानेकवैशिष्ट्यशालिनी। तत्रा सा संस्कृतिमंदाकिनी प्रवहति यया मानवता जीवनमश्नुवाना सततमुपचयमधिगच्छति। संस्कृतभाषायां यस्य निरूपणं कृतमस्ति सः प्राणिमात्रस्य सुहृत्। सः–

''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्।''[2]

संस्कृतभाषायाः साहित्यं गुरुतमम्। न कस्या अपि भाषायाः साहित्यमद्यापि तज्जेतुं पारयति। कामं प्रकामं कस्या अपि अन्यस्या भाषायाः ग्रन्थाः संख्यायां वा शब्दावलिर्गणनायां विशालतरा स्यात्। अस्याः भाषायाः सन्निधौ विद्यमाना ग्रंथाः स्वसारशालितया इतरभाषाणां ग्रन्थान् सलीलं पराभवन्ति। एतदीयायां शब्दावल्यामपि यद् व्यापकत्वं यद् गम्भीरत्वं यद् भिशर्थकत्वं, यत्प्रकृष्टत्वं, यशिशित्वं, यन्माधुर्यं, यत् प्रसादत्वं, यदोजस्त्वं, यत्सूक्ष्मत्वं, यच्च कामधुक्त्वं विद्योते न तत् तत् कस्या अपि भाषायाः शब्दश्रेणीषु सशिहितमस्ति।

संस्कृतं भाषास्वादिभाषा। सा सर्वासामपि भाषायां जननी। अस्तीयं भाषा रम्या, सरला सरसा च इति। सुरवाणी, देववाणी, सुरभारती, देवभाषा प्रभृतिभिः नाम्ना लोके विख्यातेयं भाषा। याः का अपि भाषा अद्य जगति प्रचलिताः सन्ति किं वा याश्चापि अतीतकाले काश्चन कालकलां यावज्जीवनमवाप्य विलुप्ता अभवंस्तासां निखिलानामपि भाषाणां श्रोतं इयमेवामरभाषास्ति। भाषाया एतस्याः एतस्याः सर्वभाषाजननीत्वोपपादनाय नानिवार्यत्वेनापेक्षितम्। यं हि श्रग्वेदं संसारस्याद्यं पुस्तकं सर्वे अपि प्राच्याः प्रतीच्याश्च पण्डिता एकस्वरेण स्वीकुर्वन्ति। सः स्वर्गापवर्गमार्गप्रदर्शी ज्ञानज्योतिः पुञ्जपावनप्रदीपो वेदः संस्कृतभाषायामेव संशोभते।

फ्वेदमेव सदाभ्यस्येत् तपस्तप्यन् द्विजोत्तमः।
वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तपः परमिहोच्यते।।[3]

वेदाः न केवलं कर्मकाण्डस्य उपासनायाः पूजायाः वा ग्रन्था इति मन्यते अपितु वेदेषु सर्वेषां मानवानां यद् यत् कल्याणकरं तत् तत् सर्वं निहितं वर्त्तते। इदमेव कारणं यद् युगाद् युगान्तराणि व्यतीतानि कालेन कवलीकृताः नैकाः संस्कृतयः सभ्यताश्च, परं वैदिकीः अद्यापि जीवति, न केवलं जीवति अन्यान् अपि जीवयति। वेदेषु कस्यापि एकस्य देशस्य, धर्मस्य कालस्य वा वर्णनं नास्ति। तत्रा न केवलं ब्राह्मणानाम् अधिकारः नापि च भारतीयानामेव ते तु समेषां विश्वस्थानानां मानवानां कृते वर्तन्ते। प्राचीनतमे काले वैदिकज्ञानस्य महत्त्वमासीत् अद्यापि वर्त्तते भवष्यितिकालेऽपि तन्महत्त्वं तथैव स्थास्यति। वैदिकाः ट्टषयः निगदन्ति अस्माभिः कदापि विपथगामिभिः नैव भाव्यम्। यथा–

''मा प्रगाम पथो वयं यज्ञादिन्द्र सोमिनः मान्तः स्थु
र्नो अरातयः।।''[4]

मानवजीवनस्योद्देश्यं केवलम् आहारनिद्राभयमैथुनमेव नास्ति। चरमोद्देश्यमस्ति–प्रभुप्राप्तिः आनन्दावाप्तिः। यथा –

''इयं ते यज्ञिया तनूः।[5]

अथर्ववेदस्य सुविख्याते भूमिसूक्ते ट्टषिः निगदति–

''माता भूमिः कुटुम्बकम्, यत्रा विश्वं भवत्येकनीडम्।''[6]

अपि च–

''भूमे मातर्निधहि या भद्रया सुप्रतिष्ठितम्।
संविदाना दिवा कवे श्रियां मा धेहि भृत्याम्।।''[7]

यस्य धनस्य प्राप्त्यर्थमस्माभिः पापकर्माणि क्रियन्ते तन्न कस्यापि जनस्य तत्तु विनाशशीलम्। कल्याणमीप्सुभिः जनैः प्रार्थना क्रियते–

''आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः।''[8]

सर्वाभ्यः दिग्भ्यः कल्याणकराः विचारा आयान्तु। यथा–

''विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तत्र आसुव।।''[9]

लौकिक साहित्ये वाल्मीकिप्रणीतं रामायणं, महर्षिवेदव्यासप्रणीतं महाभारतम्, अष्टादशपुराणानि, गद्यसाहित्यं काव्यसाहित्यं, कथासाहित्यं नाटकानि च अनयैव संस्कृतभाषया लिखितानि सन्ति।

लौकिकसाहित्यमेव आयुर्वेद–ज्यौतिष–व्याकरण –काव्य–दर्शन–कोष– धर्म–अर्थ–कामसंबश्रानि अनेकानि साहित्यानि स्वरूपतामायातानि। तदित्थं श्रीमन्नृ–पविक्रमार्कात् षट्सहस्रमितवत्सरपूर्वकालादारभ्य अद्ययावदनवरतरूपेण प्रणीयमानं व्याख्याय मानमभ्यस्यमान×श्च संस्कृतसाहित्यं यदि कृत्त्रिामत्वेन गृह्यते तदा तु जगदवस्थितिरेव कृत्त्रिामा सम्पद्येत। ईदृशं विस्तृतं परिपूर्णत्रंश्च साहित्यं नान्यस्यां भाषायां कुत्रााप दृश्यते। अत एव सगौरवमित्थमुदघोषितमस्ति फ्यन्नेहास्ति न तत्क्वचित् इति।

संस्कृतभाषा वस्तुतः गणितमिव एका विशुश्रा सम्पूर्ण समुचित तथ्यपूर्णा च भाषाऽस्ति। तथापि एषा गणितमिव तार्किकगणितीयविवेचनात्मिका एव नास्ति अपितु सघ्गीतमिव मानवीयभावैः अन्तः संवेदनाभिः सुनिबश्रास्ति। मनःमस्तिष्कस्य उत्थानस्य अद्भुतशक्तिसम्पन्ना तथा च ज्योतिषं शुल्वसूत्रादिविशिष्टगणितीय– विवेचनाभिः सम्पृक्तं संस्कृतम् आदर्शभाषानिष्ठज्ञानं वर्तते। तार्किकदृष्ट्या विशुऋविज्ञानं वर्तते। भावनात्मकदृष्ट्या एषा भाषा विशुऋसाहित्यस्य संवेदनायाः वा उद्गमस्थलं वर्त्तते। स्पष्टाभिव्यक्तिं समुन्नतहार्दिक प्रेरणां च समुत्पन्नकर्त्री संस्कृभाषा रचनात्मकाभिव्यकतेः अद्वितीया प्रतिभासम्पन्नाऽस्ति। एषा सम्पत्रंता सहस्रवर्षपर्यन्तं प्राचीऋषीणां वैज्ञानिकप्रतिभायाः साधनायाः वा प्रतिपफलं वर्तते।

श्रीमतिकारलोटमैनिंग महोदयायाः मन्तव्यं वर्तते यत्– फ्पाणिनीय– व्याकरणं सर्वाधिकं प्राचीनं प्रतिष्ठितत्रंच वर्तते। व्याकरणमिदं कस्याचिदपि भाषायाः भाषाविज्ञानस्य अध्ययनाय भाव्यध्येतृणामध्ययनाय च अमूल्यनिधि वर्तते। प्रो॰ मैक्समूलरमहोदयोऽपि कथयति यत् पाणिनीव्याकरणस्य वैज्ञानिकता विश्वस्मिन्। अन्यत्रा कस्यामपि भाषायां न दृश्यते। भारतस्य लब्धप्रतिष्ठः भाषाविद् प्रो॰ अलैक्जेण्डर थामसन् महोदयानुसारं संस्कृतभाषायाः वर्णमालायाः वर्गीकरणं अतुलनीयमुदाहरणं विद्यते। वाल्टरयूजीनक्लार्कमहोदयानुसारं पाणिनीयव्याकरणं शीघातिशीघ्रं समगऽपि विश्वे वैज्ञानिकव्याकरणरूपेण प्रतिष्ठितं भविष्यति।[10]

महर्षिणा पाणिनिना 2500 ईशवीयवर्षपूर्वे विरचिता 'अष्टाध्यायी' (शष्दानुशासनम्) विश्वस्य सर्वाभ्यः भाषाभ्यः सर्वेभ्यः वैज्ञानिकेभ्यश्च आदर्श– सर्वोत्कृष्टतायाः च उदाहरणरूपेण द्रष्टुं शक्यते। 'अष्टाध्यायी' ग्रन्थरचनायां या पऋतिः पाणिनिना आश्रिता तामेव पऋतिमाश्रित्य वर्तमानसर्घैणकविज्ञान प्रचलति। यदि सर्घैणकेन सह अस्याः भाषायाः प्रयोगः स्यात् तर्हि सर्घैणकजगति निश्चितमेव एका महती क्रान्तिः आगमिष्यति।

सुप्तसिऋायाः नासा (Nasa) इति संस्थायाः प्रतिष्ठितेन वैज्ञानिकेन मिस्टर रिक ब्रिग्स (Mr. Rick Brigs) महोदयेन 1980 ईशवीयवर्षे स्वशोधपत्रो स्पष्टं कृतं यत् संगणकस्यः सॉफ्रटवेयर प्रोग्रामिंग' इत्यस्य कृते संस्कृतभाषा सर्वश्रेष्ठभाषा भवितुं शक्नोति। तदनन्तरं सम्पूर्णविश्वे च भाषाविज्ञानस्य सर्घैणकस्य च अन्तःसम्बन्धानां तस्योपगितायाः सन्दर्भे च विभिन्नशोधकार्याणि अभवन्। 'जुलाई' इति मासे 1987 तमे ईश्वीयवर्षे 'पफोर्ब्स' (Forbes)12 इति पत्रिकायां इयं सूचना प्रकाशिता यत्–संस्कृतभाषा सर्घैणकस्य सॉफ्रटवेयर प्रोग्रामिंग इत्यस्य कृते सर्वश्रेष्ठ भाषाऽस्ति। एतां सूचनां श्रुत्वा संस्कृतविद्वांसः भाषावैज्ञानिकाः सर्घैणकवैज्ञानिकाश्च आश्चर्यचकिताः अभवन्। तदनुसंयुक्तसहयोगेन संस्कृतविद्वांसः सर्घैणकविशेषज्ञाश्च एतस्मिन् क्षेत्रो कार्यमारब्धवन्तः। अधुना जगति विभित्रंदेशेषु संस्कृतभाषायां सर्घैणकस्य 'सॉफ्रटवेयर–प्रोग्रामिंग' इत्यस्य कार्य प्रचलितम्। अद्यावधिः प्राप्त 'नासा' (Nasa) वैज्ञानिकानां सूचनाऽसुसारेण सम्भावित 2025 ईशवीयवर्षात् 2034 ईशवीयवर्षपर्यन्तं सर्घैणकस्य षष्ट्याः सप्तम्याश्च स्थितौ सर्घैणकानि निखिले विश्वे संस्कृतभाषायां कार्यं करिष्यन्ति। अनया वैश्विकक्रान्तया संस्कृतभाषा स्वयमेव

सम्पूर्णधरातले देदीप्यमाना भविष्यति तथा च समग्रस्यापि विश्वस्य भाषा भविष्यति इति विश्वासो वर्तते।

सर्घैणकस्य क्षेत्रो संस्कृतभाषाया अखिलविश्वस्मै अत्यन्ताकर्षकाणि उत्साहवर्धकानि द्वाराणि उदघाटितानि। संस्कृतस्य सर्घैणकस्य च अन्तःसम्बन्धानां संदर्भे भारते एव न अपितु विश्वस्य अमरीका, जर्मनी, जापान इत्यादिकेषु अनेक देशेषु अत्यन्तमहत्वपूर्णां भूमिकां निर्वहन्ति विद्वांसः। सन्दर्भेऽस्मिन्। 'इण्डियन इन्सटीट्यूट ऑपफ इन्पफार्मेशन टेक्नोलॉजी' तथा च 'पूणे एडवांस संस्कृत शोध संस्थान' इत्यनयोः भूमिका तु विशेषरूपेण प्रशंसायोग्याऽस्ति। प्राकृतिक–भाषासंस्थानस्य (NLP) माध्यमेन 'हैदराबाद' इत्यनेन एका विशिष्टयोजनाऽपि संचालिता। अनेन प्रकारेणैव 'बंगलूरू' परियोजनाऽपि एतस्याः विशिष्टार्घैत्वेन विज्ञातुं शक्यते। सम्प्रति संस्कृतभाषां सर्घैणकेन सह योजयित्वा विश्वव्यापि कर्तुं संस्कृतविद्वद्भि सर्घैणक– वैज्ञानिकेः च सघ्गणकभाषाविज्ञानम् (Computational Linguistic) भाषावैज्ञानिकी अभियान्त्रिकी (Language Engineering) इत्यादिषु विषयेषु प्रोत्साहनं करणीयम्। अस्यां दिशि 'साफ्रटवेयर इण्डस्ट्रीज' (Software Industries) वाणिज्यिक (Commercial) स्तरे तथा 'आई॰आई॰टी॰' (IIT), 'एन॰आई॰टी॰' (N.I.T.) इत्यादीनाम् अनुसन्धानस्तरे उत्कृष्टतया भूमिकाया भवितव्या। यद्यपि अस्यां दिशि 1- Translinition 2- Voice recognition इति सम्बन्ध्युपलब्धयः (Issuses) विशिष्टरूपेण विचारणीया सन्ति। तथापि समन्वितप्रयासैः एताः कठिनताः सरलतया दूरं शक्यन्ते।

संस्कृतस्य गुणवत्ता वेदानां शास्त्राणां संक्षिप्तानि संस्करणानि हिन्दी– भाषानुवादैः सह सम्पादनीयानि। तानि जनेभ्यः अल्पमूल्येन देयानि। बहवः जनाः संस्कृतमजानन्तः अपि विवादप्रसर्घे कथयन्ति यदिदं वेदेषु लिखितमस्ति, किन्तु ते वेदानामाकारमपि कदापि न दृष्टवन्तः, वेदानां मन्त्राः कीदृशाः सन्ति इति ते न जानन्ति तथापि तेषां हृदि आस्थाकारणात् ते एवं वदन्ति वेदमाहात्म्यविषये मनुनापि उक्तम्–

यः कश्चित् कस्यचिद्धर्मो मनुना परिकीर्तितः।
स सर्वोऽभिहितो वेदे सर्वज्ञानमयो हि सः।।[11]

एवं सर्वज्ञानमयत्वात् वेदानामपरिहार्यत्वमघ्गीकृतम्। यस्मिन् देशे वेदस्योद्घोषः श्रूयते स्म तस्मिन् देशे अद्य बहवो जनाः किमपि न जानन्ति। अतः संस्कृतशिक्षागुणवत्तासंवर्धनार्थमस्माभिः संस्कृतज्ञैः गेहं गेहं गत्वा वेदपरिचयः शास्त्रापरिचयः वा कारणीयः। संस्कृते यत्किमपि अमृतस्वरूपं प्राप्यते तस्य प्रचारार्थं प्रयत्नः करणीयः। संस्कृतवाघ्मये अलभ्यमानानि सुवचनानि भित्तिषूट्टंकनीयानि। संस्कृतनाटकानामभिनयोऽपि स्थाने स्थाने प्रदर्शनीयः।

अस्माभिर्वैदेशिकानामपि साधुचरितमर्घीकर्तव्यम्। भारतीयाः प्राचीन– कालेऽन्येषामपि चरित्राविषये पण्डिताः आसन्। ते विदेशीयानां ज्ञानं विज्ञानं दर्शनतत्वं च जानन्ति स्म अस्मिन् विषये मनुना उक्तम्–

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रां शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।[12]

अर्थात् विदेशीयाः स्वचरित्राविषये सन्दिहाना यदा भारतीयाचार्यन् प्रत्यागतास्तदा भारतीयास्तेषां चरित्रामुपदिष्टवन्तः। महदाश्चर्यमासीदेतत्। इदानीं चरित्रामपि न जानन्ति भारतीयाः, अन्येषां चरित्रास्य का कथा। अस्मिन् युगे विदेशीयाः संसकृतवाघ्मयं पठन्ति, रहस्यं च तस्योद्घाटयन्ति अतः एतत सर्वं मनसि निधाय संस्कृतशिक्षाभिवृ(यर्थं सर्वैः कटिबैंर्भाव्यम्।[13]

अतीते समये संस्कृतशिक्षा सम्यकू वृत्रिं गता। असंख्याः संस्कृत– शिक्षाश्रमाः आसन् ते आश्रमाः ऋषिभिः आचार्यैः विद्वद्भिः वा संचाल्यमानाः आसन्। ते विद्यादानेन जीविकार्जनतत्पराः न आसन् अपितु स्वार्जितां गुरुमुखाद्वा श्रुतां विद्यां शिष्येभ्यः समर्प्य विद्याया परम्परां शास्वतीं कर्तुकामा महदुद्देश्यवन्त अभूवन। एष एव ब्रह्मणत्वसि(ये अपरिहार्यमासीत्। सा परम्परा अद्य लुप्तप्राया सजाता। ऋषीणामाचार्याणां च सम्प्रदायो विघटितप्रायाः ये केचन अघ्गुलिगणनीयाः विद्वांसः यद्यापि तां परम्पराम् उज्जीवयन्ति। सा परम्परा संरक्षिता भवेत–गुरुकुलानि आश्रमाश्च पुनरूद्घटिताः भवन्तु तदर्थं प्रयासः समाजेन शासनेन च करणीयः।[14]

संस्कृविद्यालयेषु माध्यमिकविद्यालयेषु प्राथमिकविद्यालयेषु विश्व– विद्यालयेषु च संस्कृतस्याध्यापनमधिकाधिकं हिन्दीमाध्यमेन भवति। हिन्दीमाध्यमेन शोधप्रबन्धं लेखित्वा जनाः शोधोपाधिं लभन्ते। एतस्मात् कारणात् शिक्षाजगति संस्कृतस्य महती क्षतिः जायमानास्ति। विविधसंसकृतसंस्थासु संसकृतकक्षासु च संस्कृतस्य वातावरणं दृग्गोचरं न

भवति। अतः आवश्यकतास्ति यत् शिक्षणसंस्थासु संसकृताध्यापनं संसकृतमाध्यमेन भवेत् संस्कृतशोधप्रबन्धाः संस्कृतेन एव लिखन्तु जनाः तथा शासनेन नियमः कल्पनीयः। संस्कृतमाध्यमेनाध्यापितुं संस्कृतशिक्षकाणां प्रदेशस्तरे राष्ट्रतरे च प्रशिक्षणं भवेत्।[15]

एतेन संस्कृतशिक्षकाः संसकृतताध्यापनं संस्कृतमाध्यमेन कर्तुं समर्थाः भवेयुः। तैः संस्कृताध्यापकेः प्रयासो विधेयः यत् छात्राः संस्कृतप्रश्नानामुत्तराणि संस्कृतभाषायाः माध्यमेन ब्रूयुः। बालेषु युवसु वृद्धेषु सर्वेषु जनेषु च यथा संस्कृतं प्रति रूचिः समुत्पद्येत् तथा प्रयतनीयम्। तदर्थं पाठ्यपत्रतिः रूचिकरा करणीया।

भारते सहस्राधिकाः माध्यमिकसंस्कृतविद्यालयाः सन्ति येषु 'प्रथमा' कक्षातः 'उत्तरमध्यमा' पर्यन्तमध्ययनमध्यापनं च प्रचलित। एते विद्यालयाः एव अद्यावधि भारतीयसंस्कृतज्ञानपरम्परां रक्षितवन्तः, किन्त्वधुना एते विद्यालयाः भौतिक– सुविधानामभावकारणेन परम्परागतसंस्कृतशिक्षकचयनप्रक्रियायामवरोधकारणेन च निश्चेतनाः दुर्बलाश्च स×जाताः सन्ति। एतेषां विद्यालयानां स्तरोत्रंयनार्थं पुनरूज्जीवनार्थं च सर्वैः संस्कृतानुरागिभिः प्रयासो विधेयः।

सन्दर्भ :–

1. महाभाष्यप्रथममार्किः
2. मनुस्मृतिः –2–6.
3. मनुस्मृतिः –2–7.
4. मनुस्मृतिः –2–166.
5. श्रग्वेदः – 10 / 57 / 1.
6. यजुर्वेदः 4 / 13.
7. अथर्ववेदः – 12 / 1 / 12.
8. अथर्ववेदः –12 / 1 / 63.
9. श्रग्वेदः – 1 / 89 / 1.
10. यजुर्वेद –30 / 3.
11. भारतस्य विरासतः, पृ॰–339, 340.
12. Englisj Research Magzine, July, 1989 ad
13. MACDOELL-H.S..L.P..- 5.
14. मनुस्मृतिः –2–20.
15. महाभाष्ये पस्पशाकि

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

भारतेन्दु युगीन हिंदी व्यंग्य परंपरा

भारती कुरील
एम ए हिंदी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर

हिंदी साहित्य में व्यंग्य परम्परा प्राचीन एवं लम्बी है। इनमें सिद्धो और संतो की रचनाओ में भी आँका गया है। इनमे व्यंग्य का उद्देश्य अलग–अलग और युग बोध के अनुरूप है।

हिंदी साहित्य में व्यंग्य के अध्ययन के लिए भारतेंदु युग एवं उसके पश्चात अब तक के समय को अधिक समीचीन समझा गया है।

भारतेंदु युग को जागरण युग भी कहा जाता है। भारतेंदु युग का व्यंग्य साहित्य तात्कालीन राजनितिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों, आर्य समाज आन्दोलन तथा बंगला के माध्यम से पश्चिम के प्रभाव का परिणाम था।

अंग्रेज हमारे देश की सत्ता पर अधिकार कर चुके थे। अतः अंग्रेजी राजनीति के अनुसार देश का कारोबार चलता रहा। धार्मिक क्षेत्र में लोगो की अज्ञानता के कारण अन्धविश्वास, जादू दृटोना, चमत्कार का प्राबल्य अधिक रहा। सामाजिक क्षेत्र में समाज के अनिष्ट रीति – रिवाज, ऊँच–नीच का भाव, जातियता आदि उभरकर आए थे।

आर्थिक क्षेत्र में अंग्रेजो की व्यापारिक निति का प्रभाव हिंदुस्तान के सभी आर्थिक क्षेत्र पर हुआ। भारतीय शिक्षा में अंग्रेजी शिक्षा का प्रवेश हुआ। जिसके कारण शैक्षणिक एवं साहित्य जगत की युगीन प्रष्ठभूमि में परिवर्तन हुआ।

साहित्य के क्षेत्र में कविता की प्रधानता के स्थान पर गद्य की स्थापना एवं उसकी विविध विधाओ के विकास का शुभारंभ हुआ। कठोर व्यग्यात्मक शैली इस युग की विशेषता रही है।

सामाजिक परिस्थितियों का गहन अध्ययन और फिर अपने साहित्य के माध्यम से समाज की विसंगतियो को सुधारने के लिये समाज और सामाजिक चेतना को जीवित रखने के लिए व्यग्यात्मक शैली का आश्रय लिया। यह शैली एक कवच के समान थी जो बहुत काल तक सत्ताधारियो से व्यग्यंकार को बचाये रखती है।

भारतेन्दु युग के साहित्य में व्यंग्य का उपयोग अधिक हुआ है। लेकिन निबन्ध की विधा में इसका उपयोग एक उद्देश्य को पूरा करने के लिए किया गया है। नाटक की विधा में भी व्यंग्य का पुट है। इस युग के प्रमुख व्यग्यंकारो में भारतेंदु हरिशचंद, बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त, राधाचरण गोस्वामी आदि की रचनाएँ उल्लेखनीय है।

इनके व्यंग्य में न कही दुराव है और न ही छिपाव,और चोट सीधे की गई है। यह चोट भी सुनार की न होकर लौहार के हथोड़े की है। भारतेन्दु की अंधेर नगरी में पुलिस वालो पर व्यंग्य का एक उदाहरण–

"चूरन पुलिस वाले खाते !
सब कानून हजम कर जाते।।"

भारतेन्दु युगीन साहित्यकारों में पंडित बालकृष्ण भटट् का विशेष रूप से उल्लेखनीय स्थान है। वे सच्चे समाज सुधारक थे। जो बाहय आड़म्बर, छुआ–छूत, जाति–पाति को मिटाने के लिए सभी विषयो पर कटाक्ष करते चलते है।

इस युग के व्यंग्यकारो मे प्रताप नारायण मिश्र का महत्वपूर्ण स्थान है। विषय की दृष्टि से मिश्र जी के निबंध सामाजिक, धार्मिक, रूढ़िवादीता को उन्होंने अपने व्यंग्य का विषय बनाया। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त कर नवयुवकों द्वारा भारतीय रीती–निति को त्याग कर पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण करने वालो पर उन्होंने अत्यंत मार्मिक व्यंग्य किया है।

"जग जाने इंग्लिश हमें वाणी वस्त्रही जोय।
मिटे बढन कर श्याम रंग जन्म सुफल तब होय।।"

राधाचरण गोस्वामी इस युग के एक श्रेष्ठ व्यंग्यकार है।। इनके राजनितिक उत्पीडन, सामाजिक पाखंड और धार्मिक अंधविश्वासों पर सटीक व्यंग्य देखने को मिलते है।

बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमधन'ने अपने युग कि विसंगत समाज मे जाग्रति लेन के उद्देश्य से अनेक व्यंग्य निबंधो कि रचना की। इन्होने आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक विषयों कि विकृति, कमजोरी आदि विषयों पर प्रहार किया।

भारतेन्दु युग के अंत तथा स्वतंत्रय पूर्व युग के बीच की कड़ी जोड़ने का कार्य बाल मुकुंद गुप्त ने किया। व्यंग्य विधा के क्षेत्र में बाल मुकुंद गुप्त जी के व्यंग्य सशक्त, प्रहारी तथा सटीक रहे। प्रखर व्यंग्य इनकी शैली कि विशेषता रही।

भारतेन्दु साहित्यकारों ने यह परखा कि जैसे अंग्रेज प्रतीत होते हे, वस्तुतः वैसे नहीं है। साहित्यकारों के सामने दो विकल्प थे या तो झूठ बोलकर सरकार कि खुशामद करे या सच कहकर प्रेस एक्ट की चपेट मे आ जाये। इन दोनों स्थितियों को छोड़कर तीसरा रास्ता निकाला गया अर्थात सरकार की आलोचना के लिए हास्य और व्यंग्य का आश्रय लिया।

इस प्रकार आधुनिक हिंदी कविता में राजनितिक व्यंग का धूम–धड़ाके से जन्म हुआ जो अतीत काल में व्यंग्य की प्रकृति से भिन्न था। इस प्रकार व्यंग्य मे राजनितिक प्रशासनिक विसंगतियो और भ्रष्टाचार पर प्रहार करने और साम्राज्यवादी शोषण और षड्यंत्रो का भी भांडाफोड़ किया जाने लगा।

बाल मुकुंद गुप्त ने अंग्रेजी शासन कि फिजूल खर्ची पर जनता की भावनाओं का प्रतिनिधित्व करती एक कविता लिखी। जिसका अंश इस प्रकार है।

"देश–देश के राजा आवे
खेमे डेरे साथ उठावे
घर, दर बेचो करो उधार
बढ़िया हो पोषाक तैयार
हाथी, घोड़े भीड़–भडाका
देखो सब घर फूंक तमाशा।"

इस प्रकार भारतेन्दु युगीन व्यंग्यकारो ने तात्कालीन परिस्थितियों की मांग के अनुसार महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सामाजिक यथार्थ को विविध आयामों में प्रख्यात करने के लिए इतने बड़े पैमाने पर व्यंग्य का प्रयोग पहली बार हुआ तथा राजनितिक व्यंग्य का तो सही अर्थो मे प्रारंभ ही भारतेन्दु युग से होता है। आर्थिक विसंगतियों को पहचान कर अनावृत करने का श्रेय भी हिंदी में भारतेन्दु और उनके समकालीनो को ही जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

- हिंदी कि हास्य–व्यंग विधा का स्वरूप एवं विकास/डॉ. इंद्रनाथ मदान/हिंदी साहित्य सम्मलेन प्रयाग,1978
- हिंदी साहित्य का इतिहास/डा. नगेन्द्र
- आधुनिक हिंदी काव्य मे राजनितिक व्यंग्य/डा. विक्रमजीत
- हिंदी साहित्य का इतिहास/डा. नगेन्द्र/डा. हरदयाल/मयूर पेपर बैक्स/नोयडा

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह और गढ़पुरा (बेगूसराय) का नमक सत्याग्रह आंदोलन : एक सर्वेक्षण

डॉ. नीतिश कुमार विमल
NET (UGC), Ph.D. (Hist)

भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में सन् 1930 ई॰ का नमक सत्याग्रह एक गौरवशाली अध्याय है। जिसमें डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह का अद्‌भूत साहस एवं अपार कष्ट सहिष्णुता स्वर्णाक्षरों में अंकित है। बिहार में स्वाधीनता संग्राम को उनकी अग्रणीय भूमिका ने न केवल प्रखरता प्रदान की बल्कि युवा पीढ़ी को प्रगाढ़ राष्ट्रप्रेम और क्रांतिकारी जोश से भी भरकर उत्प्रेरित किया। इन्होंने नमक सत्याग्रह में राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के आहवान पर सक्रिय रूप से भाग लिया था। तभी तो महात्मा गाँधी ने इन्हें 'बिहार के प्रथम सत्याग्रही' के अलंकरण से विभूषित किया था।

स्वाधीनता संग्राम में डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह जब नौवीं वर्ग में पढ़ते थे उसी समय ब्रिटिश साम्राज्यवाद से देश को मुक्त कराने का संकल्प ले चुके थे, कहा जाता है कि अपने स्कूल के एक बंगाली शिक्षक के विचारों से प्रभावित होकर एक दिन वे एक हाथ में गीता और दूसरे में कृपाण लेकर कष्टहरणी घाट पर गंगा में छाती भर पानी में खड़ा हो कर प्रतिज्ञा ली कि ब्रिटिश राज को भारत से हटाकर ही दम लेंगे। उनकी यह प्रतिज्ञा 1947 ई॰ तक यानी देश की आजादी होने तक बनी रही। इस दौरान वे निरन्तर संघर्ष करते हुए तकरीबन नौ वर्ष बिहार के विभिन्न कारावासों में बिताए।[1]

स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में 1930–34 ई॰ तक चले सविनय अवज्ञा आन्दोलन एक महत्वपूर्ण कड़ी है। 3 दिसम्बर, 1929 ई॰ को लाहौर के रावी नदी के तट पर मध्यरात्री को स्वतंत्र भारत का तिरंगा झंडा फहराया गया तथा पूर्ण स्वराज्य का लक्ष्य घोषित किया गया।[2] अधिवेशन में यह प्रस्ताव पास किया गया कि गाँधी जी "जब चाहें, जहाँ चाहें सविनय अवज्ञा आंदोलन प्रारम्भ कर" करबंदी तथा नमक कानून भंग कर सकते हैं। आंदोलन आरम्भ करने के पूर्व महात्मा गाँधी ने संघर्ष रोकने का प्रयत्न किया था। उन्होंने ब्रिटिश अधिकारियों को पत्र लिख कर काँग्रेस से समझौता करने, उसकी ग्यारह शर्ते स्वीकार करने का आग्रह किया था। लेकिन लार्ड इरविन ने उनके आग्रह को ठुकरा दिया था। इस पर गाँधी जी ने प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा कि "मैने रोटी माँगी थी और मुझे उत्तर में पत्थर मिला"।[3] अंततः महात्मा गाँधी ने एकमात्र विकल्प सविनय अवज्ञा आंदोलन के लिए देशवासियों का आवाहन किया।

सविनय अवज्ञा आंदोलन का आरम्भ गाँधी जी नमक सत्याग्रह के साथ आरम्भ किया। इसके पीछे उनकी सोच थी कि नमक पर सरकार का एकाधिकार था और उस पर गरीब से गरीब नागरिक को वर्ष में पाँच आने की दर से कर देना पड़ता था। और यह उसकी तीन दिनों की आय थी। अतः महात्मा गाँधी ने इस एकाधिकार एवं कर के विरोध मे नमक सत्याग्रह करना उपर्युक्त समझा। 12 मार्च 1930 ई॰ को सुबह छः बजे गाँधी जी नमक कानून तोड़ने के लिए 79 स्वयं–सेवकों के साथ साबरमती आश्रम (अहमदाबाद) से लगभग 200 मील दूर समूद्र किनारे डांडी नामक स्थान की आर चल पड़े। 24 दिनों के यात्रा के पश्चात् 6 अप्रैल को उन्होंने समूद्र के किनारे नमक बनाकर कानून का उल्लंघन किया।[4] इस सत्याग्रह आंदोलन पर अमेरिका की मशहूर पत्रिका टाईम ने 2011 के अक्टूबर अंक में डांडी मार्च (नमक सत्याग्रह) को दुनिया को बदल देने वाले 10 (दस) महत्वपूर्ण आन्दोलनों की सूची में दूसरे स्थान पर रखा है। इससे महात्मा गाँधी के नेतृत्व में हुए नमक सत्याग्रह आंदोलन एवं इसकी व्यापकता का पता चलता है।

महात्मा गाँधी के इस आह्‌वान का व्यापक असर सारे देश के साथ ही बिहार में भी हुआ। डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह ने भी कौंसिल जाना बंद कर अपने सहयोगियों एवं नेताओं के साथ गाँव–गाँव का दौरा कर नमक कानून उल्लंघन की तौयारी शुरू कर दी। 2 अप्रैल 1930 को मुंगेर में जिला काँग्रेस कमिटी की बैठक डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह की अध्यक्षता में हुई जिसमें नमक कानून भंग करने का निर्णय लिया गया।[5] इसके लिए दो स्थानों का चयन किया गया। सदर सबडिविजन मे चौकी ग्राम तथा बेगूसराय में गढ़पुरा ग्राम। चौकी ग्राम के प्रभारी श्री शशिभूषण राय और गढ़पुरा के श्रीकृष्ण सिंह बनाये गये तथा यह भी निश्चय हुआ कि नमक कानून भंग करने के लिए स्वयं

सेवकों को अपने–अपने गंतव्य स्थान पर पैदल ही पहुँचना होगा।[6]

जिस समय बिहार में नमक सत्याग्रह प्रारम्भ किया गया था उस समय डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह का स्वास्थ्य ठीक नहीं था। राजेन्द्र प्रसाद नहीं चाहते थे कि इस नमक सत्याग्रह की बागडोर स्वयं डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह संभालें। किन्तु अपनी अस्वस्थता के बावजूद 17 अप्रैल 1930 को गोगरी के ग्यारह सत्याग्रहियों के साथ उन्होंने मुगेर से गढ़पुरा के लिए प्रस्थान किया। सत्याग्रह में भाग लेने वाले स्वयं सेवकों को विभिन्न सत्याग्रही जत्थे में बाँट दिया। प्रत्येक जत्थे का नामांकरण देश के सम्मानित नेताओं के नाम पर रखा। "गाँधी जत्था", "तिलक जत्था", "जवाहरलाल नेहरू जत्था", "राजेन्द्र जत्था", "तिलक जत्था" प्रमुख थे। प्रत्येक जत्थे के स्वयंसेवकों को हिदायत दी कि सरकारी दमन के बावजूद नमक बनाना बंद नहीं होने चाहिए। पुलिसिया कार्रवाई के बावजूद भी हर–हाल में आन्दोलन की मशाल जलती रहनी चाहिए। आंदोलन के कार्यों में प्रमुख रूप से नमक कानून को तोड़ना, नमक बनाना, मादक वस्तुओं, शराब–अफीम आदि के दुकानों पर धरना देना, सरकारी करों को नहीं देना आदि प्रमुख कार्य थे। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि प्रस्थान करने के पूर्व डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह ने उस समय के कलक्टर ली साहब को लिखकर अल्टीमेटम भी दिया था कि "हम 24 बोलेन्टियर के साथ महात्मा गाँधी के आदेशानुसार 21 अप्रैल, 1930 को बिना लाइसेंस के गढ़पुरा गाँव में नमक बनायेंगे और बिना टैक्स के नमक खायेंगे। इस पर ली साहब ने जवाब दिया कि यह आपकी मर्जी है आप लोग गाँधीजी के आदेश के मुताबिक काम करते हैं और हम ब्रिटिश सरकार के नौकर हैं हमको जो आदेश सरकार देगी, हम करेंगे।"[7]

मुंगेर से गढ़पुरा की दूरी लगभग 40–50 कि॰मी॰ की थी। 17 अप्रैल को डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह मुंगेर से चलकर अपने दल–बल के साथ बेगूसराय पहुँच गये। नमक कानून भंग करने की सूचना सरकार को पहले ही दी जा चुकी थी। मुंगेर से बेगूसराय एवं गढ़पुरा तक की पैदल यात्रा के दौरान डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह का जत्था जिन–जिन गाँवों के पास से गुजरा स्थानीय नागरिकों ने अभूतपूर्व स्वागत किया। सभी सत्याग्रहियों को फूल की माला तथा चन्दन की टीका लगाकर आगे बढ़ने को उत्साहित किया जाता था। 18 अप्रैल, 1930 ई॰ को जत्था मंझौल में श्री राम किशोर सिंह उर्फ रामबाबू के घर पर रात्रि विश्राम किया। दूसरे दिन 19 अप्रैल, 1930 ई॰ को रात्रि विश्राम सकरा हरमैन नामक गाँव में व्यतीत किया।[8] चौथे रोज रात को गढ़खौली गाँव में रात्रि विश्राम हुआ। इस प्रकार डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह सारे जत्थे के साथ अगले दिन गढ़पुरा गाँव पहुँच गए। गढ़पुरा वासियों ने उनका नागरिक अभिनन्दन किया। गढ़पुरा पहुँचकर सर्वप्रथम डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह ने प्रमुख कार्यकर्त्ताओं की एक मीटिंग बुलाया जिसमें विन्देश्वरी बाबू, महावीर बाबू, बनारसी बाबू, दामोदर बाबू, रामनारायण सिंह और कमलेश्वरी बाबू प्रमुख थे। गाँव के सभी लोगों ने सभी तरह के सहयोग देने का आश्वासन दिया तथा स्थानीय ठाकुरबाड़ी के महन्त सुखराम दास जी ने स्वयंसेवकों को ठहरे के लिए अपनी ठाकुरवाड़ी में जगह दी। यहाँ यह उल्लेख करना जरूरी होगा कि मुंगेर से तो श्री कृष्ण बाबू 12 आदमी के साथ चले थे लेकिन रास्ते में सैंकड़ों लोग उनके जत्थे में शामिल हो गए। चेरिया बरियापुर, मंझौल, बिहट (रामचरित्र बाबू) आदि गाँव के लोग उनके जत्थे में सैंकड़ों की संख्या में शामिल हो गए। इस प्रकार गढ़पुरा पहुँचकर इन वोलेन्टियर की संख्या करीब 3–4 हजार तक पहुँच गयी थी। इससे पता चलता है कि इस यात्रा के दौरान जनता का व्यापक जन समर्थन डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह के नेतृत्व में चलाए गए इस सत्याग्रह को मिला था।

21 अप्रैल को सुबह डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह गढ़पुरा पहुँचे। पैदल चलने के कारण उनके पैरों में छाले पड़ गए थे। वे कमलेश्वरी बाबू का कंधा पकड़कर चल रहे थे। गोगरी के कमलेश्वरी सिंह मास्टर थे, वे राष्ट्रीय गाना बहुत बढ़िया गाते थे। कमलेश्वरी बाबू और विन्देश्वरी बाबू ने मिलकर स्वागत में राष्ट्रीय गीत गाये। इसके बाद डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह को गढ़पुरा के ही दामोदर बाबू के बंगले पर ले जाया गया।[9] जहाँ उनके ठहरने का इंतजाम था।

डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह द्वारा दिए गए अल्टीमेटम के पश्चात् मुंगेर का कलक्टर ली साहब ने बेगूसराय के सबडिविजनल एस॰डी॰ओ॰ अय्यर साहब को बुलाकर उस अल्टीमेटम को दिखाया और कहा कि आपके इलाके में श्री बाबू अपने जत्थे के साथ नमक कानून को तोड़ने जा रहे हैं, यह सरकारी नियम के खिलाफ है। सरकारी कानून टूटना नहीं चाहिए। इसके लिए आपको सारा इन्तजाम करना है। आपके पास पर्याप्त सिपाही नहीं हैं। अतः मैं मुंगेर से 50 सिपाही भेज रहा हुँ। विदित हो कि उस समय बेगूसराय सबडिविजन में

चार थाने थे। सारे थाने के थानेदारों और पुलिस इंस्पेक्टर तथा एस॰पी॰ को बुलाया तथा आदेश दिया कि थाने के सभी सिपाहियों, चौकीदारों तथा दफादारों को गढ़पुरा 20 अप्रैल तक पहुँच जाना है इस प्रकार सत्याग्रह कार्यक्रम के दो रोज पहले ही 50 मिलिट्री के जवान पहुँच भी गए थे।[10] सत्याग्रह स्थल से थोड़ी दूर पश्चिम में बुधू नोनिया का बगीचा था, इसी में फौज ने अपना कैम्प गिराया। गढ़पुरा गाँव के लोगों ने यह पहले से निश्चय कर रखा था कि अंग्रेजी सरकार के मुलाजिमों को कोई सौदा–पानी या मदद नहीं देना है और तो और गाँव के डाक बंगले को छोड़कर अगल–बगल के सारे कुएँ में गोबर, कादो, किरासन तेल घोलकर डाल दिया गया था। शकरपुरा ड्योढ़ी उस समय कोर्ट ऑफ वार्ड के अन्तर्गत थी। ड्योढ़ी कलक्टर साहब के अधीन थी। वहीं से बैलगाड़ी से फौज के लिए रसद–पानी ढोकर लाया गया।

डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह दामोदर बाबू के बंगले से 21 तारीख को दिन के करीब डेढ़ बजे सत्याग्रह के लिए रवाना हुए। कॉमरेड ब्रह्मदेव कमलेश्वरी बाबू और अन्य सैंकड़ों लोग इनके साथ चल पड़े। प्रस्थान से पूर्व डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह के माथे पर तिलक लगाया गया एवं उनकी आरती उतारी गई। सत्याग्रह का स्थल दुर्गागादी में था।[11] वहाँ पर उस समय करीब 50–60 हजार की भीड़ उपस्थित हो गई थी। सभी लोग अपने नेता डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह की वीरता, साहस और त्याग का प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहते थे। आखिर वह क्षण आ ही गया जिसका महीनों से तैयारी चल रही थी। डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह ने पण्डाल में प्रवेश कर सबसे पहले तिरंगा का अभिवादन किया फिर कहा कि नमक बनाने का कार्यक्रम प्रारंभ किया जाए। इस अवसर पर डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह ने संक्षिप्त भाषण देते हुए कहा कि– **"मैंने कलक्टर साहब को लिखकर दे दिया है कि अब जनता नमक पर टैक्स नहीं देगी। हम बिना लाइसेंस के नमक बनाएँगे। आप लोगों से निवेदन है कि शांति बनाए रखें। नमक बनना प्रारंभ हुआ है। हमलोग सत्य–अहिंसा के पुजारी हैं। गाँधीजी के बताए हुए रास्ते पर चलकर हमें अपने देश को अंग्रेजी शासन से मुक्त कराना है। कुछ क्षण में हमारे ऊपर गोली चलेगी, हमको खौलते गर्म कराह में झोंक दिया जाए, हमको मार दिया जाए, जेल में बन्द कर दिया जाए लेकिन आप उपस्थिति तमाम लोगों को हिंसा का रास्ता नहीं अपनाना है। आपलोग शान्ति से देखें कि अंग्रेजी हुकूमत क्या करती है और हम सत्याग्रही क्या करते हैं। किसी प्रकार का हंगामा नहीं होना चाहिए।"**[12]

डॉ॰ श्रीकृष्ण बाबू ने वहाँ उपस्थित हजारों लोगों से हाथ उठाकर शान्ति बनाए रखने का भी वादा लिया। ज्योंही चूल्हा जलाया गया, वहाँ पर मौजूद अंग्रेजी सरकार के सी॰आई॰डी॰ ने बेगूसराय में एस॰डी॰ओ॰ अय्यर साहब को सूचना दे दी कि नमक बनना शुरू हो गया है। इसके बाद अय्यर साहब ने ए॰एस॰पी॰ को फौज लेकर गढ़पुरा कूच करने का आदेश दिया। आदेश के बाद अय्यर साहब और ए॰एस॰पी॰ आगे और पीछे–पीछे उनकी फौज साथ में चौकीदार–दफादार का काफिला भी मार्च करते हुए पंडाल के पास पहुँची। अय्यर साहब सीधे पण्डाल में पहुँचे उस समय डॉ॰ श्रीकृष्ण बाबू भाषण कर रहे थे, अय्यर साहब ने डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह के सामने हाथ बढ़ाकर कहा–'श्री बाबू, लाइसेंस दीजिए।' श्रीकृष्ण सिंह ने कहा–कौन–सी चीज का लाइसेंस आप माँग रहें हैं? अय्यर साहब ने कहा– आप जो नमक बना रहें हैं उसके लिए कलक्टर साहब से लाइसेंस लेना पड़ता है। क्या आपने कलक्टर साहब से लाइसेंस प्राप्त किया है?

डॉ॰ श्रीकृष्ण बाबू ने कहा कलक्टर साहब 'लाइसेंस की अब जरूरत नहीं है अब भारतवर्ष के लोग बिना लाइसेंस के नमक बनायेंगे और बिना टैक्स दिये नमक खायेंगे।' इसके बाद अय्यर साहब ने ए॰एस॰पी॰ को आदेश दिया कि डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह के पास नमक बनाने का लाइसेंस नहीं है नमक बनाना अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ हैं। अतः आप इन्हें नमक बनाने मत दीजिए। ख्याल रहे कि सरकारी नियम टूटने नहीं पाए। ताकत का सहारा लेकर यहाँ से सभी को हटा दीजिए। चूल्हा–चौकी तोड़ दीजिए। ए॰एस॰पी॰ ने अपने मातहत हवलदारों को तुरन्त आदेश दिया कि वॉलिन्टियरों को हटाकर लाठी के सहारे सारे चूल्हा–चौकी को तोड़ दो।[13]

प्रतिक्रिया स्वरूप 24 वॉलिन्टीयरों का जत्था जो पहले से ही तैयार था तुरन्त एक दूसरे के हाथ को पकड़कर कड़ाह को घेरे में ले लिया। अंग्रेजी सिपाही भी अपनी ताकत से लोगों से हाथापाई खींचतान शुरू कर दिया। इसी बीच एक मुसलमान सिपाही ने गोगरी के एक वोलेन्टियर मुरलीधर मिश्र को बड़े जोर से खींचा जिसके कारण मिश्र जी सारा के खौलते कड़ाह में गिर पड़े। उनका पूरा चेहरा जल गया। कुमार संभव

का करिया नामक चौकीदार ने पीछे से डॉ॰ श्रीकृष्ण बाबू का पैर खींचा।[14] वे भी गिर पड़े। किन्तु पुनः उठकर सत्याग्रहियों का मनोबल ऊँचा करते हुए कहा– "मुट्ठी टूट जाय पर खुले नहीं।"[15] वोलेन्टियर के कड़ाह में गिरने और कड़ाह के उलटने के कारण शोरा का छिलका उड़कर डॉ॰ श्रीकृष्ण बाबू के शरीर पर पड़ा जिसके कारण उनके शरीर पर कई फोड़े हो गए। इसके बाद सिपाहियों और वोलेन्टियर में हाथापाई, पकड़–खींच, उठा–पटक तेज होने लगी। डॉ॰ श्रीकृष्ण बाबू की टोपी कहीं गिरी, चश्मा छिटककर दूर फेंका गया। उसके शीशे फूट गए। उनकी आँखों में भी चोट आई। शरीर पर के कपड़े भी फट गए। उनके पैर–ठेहुना तथा हाथ पर फोड़े निकल आए। उनका सम्पूर्ण शरीर मिट्टी से लथपथ हो गया। अन्त में जब वे बिल्कुल निशक्त हो गए तब खौलते कड़ाह से किसी प्रकार उन्हें अलग किया गया।

तोड़–फोड़, उठा–पटक, खीच–पकड़ का ताण्डव लगभग एक घंटे तक गढ़पुरा के सत्याग्रह स्थल पर चलता रहा। इधर हालत को देखकर स्थानीय लोग आग–बबूला होकर बौखला रहे थे। डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह तब भी लोगों से शांति बनाए रखने का आग्रह कर रहे थे। पुलिस सारे कार्यकर्त्ताओं को मार–पीट कर, चूल्हा–चौकी तोड़कर वापस लौट गयी।

घायल डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह और दूसरे स्वयं सेवकों को विन्देश्वरी बाबू के निवास पर लाया गया।[16] यहाँ उन्होंने अपने घाव का इलाज करवाया तथा अपने फटे हुए कपड़े को बदला, फिर उस दिन के सत्याग्रह कार्यक्रम को समाप्त कर अगले दिन का कार्यक्रम कार्यकर्त्ताओं को समझाकर शाम को बेगूसराय चले गये। मटिहानी के सतीश बाबू के पास नमक सत्याग्रह की अगली योजना थी अतः डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह बेगूसराय से मटिहानी चले गए। दूसरे दिन जब पुनः श्रीकृष्ण सिंह मटिहानी से लौटकर गढ़पुरा आ रहे थे तो पुलिस पहले से ही कहीं से बना हुआ नमक प्रस्तुत कर वारन्ट निकलवा लिया था। जबकि उस दिन तक गढ़पुरा में नमक नहीं बन पाया था। लेकिन फर्जी साक्ष्य प्रस्तुत कर उनकी गिरफ्तारी की गई। गिरफ्तारी के बाद पुलिस उन्हें बेगूसराय से बखरी डाक बंगला पर लाया जहाँ एस॰डी॰ओ, अय्यर की इजलास में मात्र दस मिनट की सुनवाई के पश्चात् उन्हें छः महीने की सजा सुना कर भागलपुर जेल भेज दिया।[17] दूसरे दिन पुलिस सत्याग्रह करने वाले अन्य नेता जैसे कमलेश्वरी बाबू, कॉमरेड ब्रह्मदेव आदि को गिरफ्तार कर लिया। इसके बावजूद गढ़पुरा में नमक सत्याग्रह आन्दोलन चलता रहा।

श्रीकृष्ण सिंह एवं इनके सहयोगियों की गिरफ्तारी के विरोध में मुंगेर जिले सहित पुरे बिहार में सरकार की दमनकारी नीति की घोर निन्दा हुई। श्रीकृष्ण सिंह को कुछ ही दिनों में भागलपुर जेल से चार साथियें सहित जिसमें नंद कुमार सिंह प्रमुख थे को हजारी बाग सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया। हजारीबाग ले जाते समय श्रीकृष्ण सिंह का बायाँ हाथ नन्द कुमार सिंह के दाहिने हाथ से बँधा था। नाथनगर रेलवे स्टेशन पर लोगों की भारी भीड़ जमा हो गयी थी। श्रीकृष्ण सिंह ने नंद कुमार सिंह के साथ बंधे हाथ उठाकर लोगों का अभिवादन स्वीकार करते हुए कहा कि "इस हथकड़ी की कुंजी उनके देशभक्त साथियों के हाथो में ही है।[18] अंग्रेजी सरकार की इस बर्बरतापूर्ण कारवाई पर उस समय के अखबारों ने भी कड़ा विरोध किया था।

डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह को हथकड़ी पहनाकर जेल भेजने से बिहार तथा उड़ीसा लेजिस्लेटिव कौंसिल में भी काफी हंगामा हुआ। धनराज शर्मा, रजनधारी सिंह एवं मौलवी अब्दुल धानी ने इस पर सदन में तत्कालीन सरकार से जवाब मांगा। पूरे प्रांत में भी इस पर आक्रोश बढ़ता जा रहा था। फलस्वरूप सरकार ने नियमावली में परिवर्तन कर प्रावधान कर दिया कि 'अ' और 'ब' वर्ग के कैदियों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने के क्रम में हथकड़ी नहीं पहनाई जाएगी, जब तक कि रास्ते में उनके भाग जाने की संभावना नहीं हो।

इन गिरफ्तारियों के पश्चात् भी नमक बनाने की प्रक्रिया में किसी तरह का व्यवधान नहीं हुआ। गढ़पुरा ग्राम उत्तरी बिहार का नमक बनाने का प्रमुख केन्द्र बन गया। सत्याग्रह की बागडोर शिरनियाँ के श्री सुरेन्द्र चन्द्र मिश्र को दिया गया। लगभग तीन सप्ताह तक नमक बनाने का कार्यक्रम चलता रहा। तैयार नमक को लोगों ने ऊँची कीमत पर खरीदना शुरू किया। इस अन्तराल में पुलिस का भी उपद्रव जारी रहा और सत्याग्रहियों को गिरफ्तार करने का सिलसिला भी चलता रहा।

अक्टूबर 1930 में श्रीकृष्ण सिंह जेल से रिहा होने के बाद समूचे मुंगेर जिले में सविनय अवज्ञा

आंदोलन को प्रखर और सफल बनाने में अपनी पूर्ण ताकत लगा दी। तकरीबन सौ से अधिक स्थानों पर कार्यकर्त्ताओं ने निर्भय होकर नमक बनाने का कार्यक्रम जारी रखा। नमक बनाने का कार्य जून 1930 ई॰ तक चलता रहा और लोगों ने नमक कानून का उल्लंघन किया।

इस प्रकार निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह के नेतृत्व में बिहार के कार्यकर्त्ताओं एवं आन्दोलनकारियों ने अपना बहुमूल्य योगदान देकर गाँधीजी के नेतृत्व में चलाए गए देशव्यापी नमक सत्याग्रह आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बिहार में गढ़पूरा (बेगूसराय) में इस दौरान भारी जन आंदोलन एवं विप्लव हुआ। आंदोलन सविनय अवज्ञा आन्दोलन की सीमाओं से भी बाहर निकल गया। परिणामस्वरूप इस सत्याग्रह ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम, महात्मा गाँधी एवं बिहार में स्वयं डॉ॰ श्रीकृष्ण सिंह को नए सिरे से परिभाषित एवं प्रतिष्ठित भी किया।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. प्रसाद, रामचन्द्र, आधुनिक भारत के निर्माता श्रीकृष्ण सिंह, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अक्टूबर 1986, पृ०–25
2. सिंह, प्रसाद, कवीन्द्र, डॉ० श्रीकृष्ण सिंह और 1930 ई० का नमक सत्याग्रह, प्रकाशित स्मारिका, 21 अक्टूबर, 2011, पटना, पृ०–96
3. वही
4. वही
5. प्रसाद, रामचन्द्र, पूर्वोद्धृत, पृ०–56
6. द सर्चलाईट, दैनिक समाचार पत्र, 18 अप्रैल, 1930
7. सिंह, नाथ, पशुपति, बिहार केसरी डॉ० श्रीकृष्ण सिंह स्मृति–कलश, श्रीकृष्ण ज्ञान मंदिर, छज्जूबाग, पटना, 1987, पृ०–181
8. सिंह, कुमार समीर, बिहार के राजनीतिक एवं सामाजिक संदर्भ में डॉ० श्रीकृष्ण सिंह का योगदान, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 2001, पटना, पृ०–52
9. प्रसाद, रामचन्द्र, पूर्वोद्धृत, पृ०–57
10. सिंह, नाथ, पशपुति, पूर्वोद्धृत, पृ०–182
11. वही, पृ०–58
12. सिंह, नाथ, पशपुति, पूर्वोद्धृत, पृ०–184
13. वही, पृ०–185
14. वही
15. सिंह, नारायण महेन्द्र, बिहार केसरी और नमक सत्याग्रह, नरता के अभियान, पृ०–59
16. सिंह, प्रसाद कवीन्द्र, पूर्वोद्धृत, पृ०–100
17. सिंह, कुमार समीर, पूर्वोद्धृत, पृ०–54
18. प्रसाद, रामचन्द्र, पूर्वोद्धृत, पृ०–58

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

अवतारवाद में वराह अवतार

रेनू चौधरी
शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

विष्णु के बाराह अवतार के बीजांकुर के रूप में ऋग्वेद में[1] वराह रूप का उल्लेख किया गया है। इसमें आख्यात है कि शक्तिशाली धुर्धारी विष्णु ने पर्वत को विदीर्ण करते हुए उसके पीछे रहने वाले वराह को आहत कर डाला और पका हुआ अन्न अपहृत कर लिया। ऋग्वेद के एक दूसरे मंत्र में लगभग इसी प्रकार का उल्लेख मिलता है जिसमें ऋषि इन्द्र से कहता है कि हे इन्द्र तुम्हारे द्वारा प्रेरित त्रिविक्रम विष्णु सौमहिष, पायस अथवा खीर तथा एक भयंकर सूकर (एमुष) को उठा ले गये।[2]

अधिकांश विद्वानों ने ऋग्वेद के मंत्र (1.61.7)

("मुषायद विष्णुः पचतं सहीयान् विध्यद् वराहं तिरो अद्रिमस्ता")

में वराह वध को इन्द्र द्वारा वृत्तवध का प्रतीकात्मक वर्णन स्वीकार किया है।[3]

विष्णु के वराह अवतार का वर्णन तैत्तिरीय संहिता, तैत्तिरीय ब्राह्मण तथा शतपथ ब्राह्मण में मिलता था। तैत्तिरीय संहिता में कहा गया है कि पहले इस संसार में एकमात्र जल ही विद्यमान था प्रजापति वायु के रूप में उसमें विचरण करने लगे वहां उन्होंने जल में डूबी हुयी पृथ्वी को देखा तब वह वराह का रूप धारण करके उसे बाहर निकाला।

आपो वा इदमग्रे सलिलमासीत। तस्मिन प्रजापतिर्वायुर्भूत्वाऽचरत्।

स इमाम पश्यत। तं वराहो भूत्वाऽहरत्।।[4]

फिर ब्रह्मा का रूप धारण करके उन्होंने उसका जल पोंछा तथा उसे चपटी बनाया। इसे चपटी किए जाने अर्थात् फैलाए जाने के कारण इसे पृथ्वी कहा जाता है।[5]

इस संहिता के ब्राह्मण अर्थात् तैत्तिरीय ब्राह्मण में प्रजापति के द्वारा पृथ्वी के उद्धार की इस कथा को पर्याप्त विस्तार के साथ वर्ण्दन किया गया है।[6]

तैत्तिरीय आरण्यक में कहा गया है कि पृथ्वी का उद्धार करने वाले प्रजापति जो काले वराह के रूप में थे उनके एक सहस्त्र हाथ थे।[7]

महानायणी उपनिषद[65] तथा पद्म पुराण के सृष्टि खण्ड में इसी आशय का एक श्लोक मिलता है–

"उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना।"[8]

अधिकांश विद्वान यह मानते हैं कि कथा के दोनों रूप एक ही कथा के क्रमशः दो भाग प्रतीत होते हैं। ऋग्वैदिक कथा अर्थात् प्रथम भाग में वराह देवताओं का शत्रु होकर आता है जिसे ब्राह्मण ग्रन्थोक्त कथा भाग में सृष्टि की उत्पत्ति से जोड़कर उसे प्रजापति का अवतार बताकर एक उत्कृष्ट स्थिति प्रदान कर दी जाती है। सम्भवतः इसीलिए ऋग्वेद एवं ब्राह्मण ग्रन्थों में 'एमुष' अथवा 'एमूष' शब्द वराह के दोनों कथा भागों के सन्दर्भ में प्रयुक्त मिलता है। खोण्डा के अनुसार ऋग्वेद में प्राप्त वराह के लिए एमूष शब्द की पुनरावृत्ति पुनः शतपथ ब्राह्मण में करके दोनों कथा परम्परा की अविच्छिन्नता को आलोकित किया गया है।[9]

डॉ. गयाचरण त्रिपाठ ने खोण्डा के उक्त मत की समीक्षा करते हुए यह मत प्रतिपादित किया है–

कि ऋग्वेद एवं ब्राह्मण गन्थों में प्राप्त वराह सम्बन्धी दोनों कथाओं का सम्बन्ध परस्पर अलग–अलग है। ऋग्वेद की कथा में वराह एक असुर है जिसका वध इन्द्र करते हैं दूसरी कथा में वराह प्रजापति का रूप है जो अपनी शक्ति के बल पर जलमग्न पृथ्वी को बाहर लाकर प्रतिष्ठित करता है। इसके साथि ही साथ तैत्तिरीय संहिता में दोनों कथा रूप अपने–अपने रूप से वर्णित मिलती हैं।[10]

वस्तुतः दूसरी कथा अर्थात् वराह द्वारा पृथ्वी का उद्धार का मूलस्त्रोत अथर्वेद में प्रापत होता है। इस वेद में पृथ्वी और वराह को परस्पर सम्बन्धित बताया गया है–

"वराहेण पृथिवी संविदाना सूकराय विजिहीते मृगाय"

वैदिक ग्रन्थों में वर्णित वराह का रूप प्रजापति का ही है न कि विष्णु का। रामायण में भी वराह को प्रजापति का ही रूप बताया गया है।[11]

परन्तु महाभारत में आख्यात है कि संसार का कल्याण करने के लिये[12] विष्णु ने वराह रूप धारण करके हिरण्यक्ष का संहार किया।[13]

पुराणों में वैदिक ग्रन्थों में वराह अवतार सम्बन्धी तथ्य को विष्णु के सन्दर्भ में स्वीकार किया गया है। वायु पुराण में ब्राह्मण ग्रन्थोक्त वराह अवतार की कल्पना की भावना विशद् रूप में वर्णित किया गया है।[14]

वायु पुराण के उल्लेखानुसार प्रलयकालीन जल से पृथ्वी रसातल में डूब गयी उस समय आदि पुरुष स्वयंभू नाराण जल में शयन कर रहे थे। जल अर्थात् नार में शयन करने के कारण उन्हें नारायण कहा जाता है। कालरात्रि के अंत में उन्होंने पुनर्सृष्टि के लिए ब्रह्मा का रूप धारण किया। वायु के सदृश अति लघुकाय होकर इधर–उधर अंधकार में विचरण करने लगे। पृथ्वी को जल में डूबी हुयी देखर जलक्रीड़ा करने के लिए वराह का रूप धारण कर लिया। उनके शरीर की लम्बाई 10 योजन तथा ऊँचाई 100 योजन थी तथा रंग नीले मेघ के समान और मुंह की आवाज मेघगर्जन के समान थी। विशाल पर्वत के समान सफेद तीक्ष्ण और कठोर दांतों से युक्त उस वराह की आंखें विद्युत तथा अग्नि के सदृश चमकीली थी। इस प्रकार अनुत्तेजस्वी रूप को धारण करके पृथ्वी का उद्धार करने हेतु वे रसातल में प्रवेश किये।[15]

इस प्रकार वायु पुराण में यह स्पश्ट किया गया है कि प्रजापति ब्रह्मा ही सृष्टि रचना के निमित्त परम पुरुष नारायण के रूप में जल में ऊबी हुयी पृथ्वी का उद्धार करते हैं।

"आपो नारा वै तनव इत्यपां नाम शुश्रुम

अप्सु शेते च यत्तस्मात्तेन नारायणः स्मतः।।"

इस प्रकार वायु पुराणोक्त नारायण का तादात्म्य वैदिक प्रजापति से सीधे जुड़ा हुआ दिखलाया गया है। ज्ञातव्य है कि शतपथ ब्राह्मण में पुरुष नारायण एवं प्रजापति के परस्पर सम्बन्ध को स्पष्ट किया गया है–

(पुरुष नारायणं प्रजापतिउवाज यजस्व यजस्वेति)[16] अन्यत्र इसी ब्राह्मण में पुरुष (नारायण) को प्रजापति का विशेषण बताया गया है।[17]

ऋग्वेद में सृष्टि के प्रारमी में सर्वत्र जल की व्याप्ति का उल्लेख मिलता है। उसके अनुसार इसी जल के भीतर सृष्टिकर्ता एवं सृष्टि नियामक परम पुरुष अवस्थित था।[18]

तद्उपरान्त उसी जल में हिरण्यमय अण्ड से हिरण्यगर्भ प्रजापति की उत्पत्ति हुयी।

(हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत)[19]

नारायण एवं प्रजापति के तादात्म्य की भावना स्मृतियों एवं पुराणों में किसी न किसी रूप में विद्यमान थी। विष्णु पुराण में ब्रह्मा एवं नारायण को एक ही बताया गया है।[20]

परन्तु इसी पुराण में अन्यत्र ब्रह्मा विष्णु और रूद्र को परस्पर समेकित करने का प्रयास भी किया गया है।[21]

मनुस्मृति में नाराण एवं ब्रह्मा का परस्पर तादात्म्य स्थापित करते हुए अभिन्न कहा गया है।

इस प्रकार नारायण अथवा पुरुष शतपथ ब्राह्मण में प्रजापति के एक विशेषण के रूप में प्रचलित तो था परन्तु वैदिक युग में यहां तक कि ब्राह्मणों आरण्यकों के युग में भी नारायण स्वयं एक महत्वपूर्ण देवता के रूप में स्वतन्त्र यक्ता प्राप्त नहीं कर सके थे। नारायण को पूर्ण–व्यक्तित्व एवं महत्व कालान्तर में विष्णु को प्रधान पौराणिक देवता के रूप में उत्कर्ष के साथ एक स्वतन्त्र अस्तित्व प्राप्त हुआ। यही कारण हे कि नारायण विशेषण कालान्तर में प्रजापति से हटकर विष्णु के साथ जुड़ गया। यद्यपि पौराणिक स्मृति में नारायण एवं ब्रह्मा के परस्पर एकत्व की धारणा किसी न किसी रूप में अवशिष्ट अवश्य मिलती है।[22]

विष्णु पुराण में सर्वप्रथम नाराण को जगत सृष्टा ब्रह्मा एवं प्रजापति कहा गया है किन्तु बाद में उन्हें ब्रह्मस्वरूप, स्थिरात्मा, परमात्मा आदि विशेषणों से युक्त करते हुए विष्णु के साथ समेकित करने का प्रयास किया गया है।[23]

ध्यातव्य है कि विष्णु पुराण की तरह ब्रह्माण्ड पुराण[24] में भी वराह अवतार को नाराण ब्रह्मा से ही जोड़ा गया है। परन्तु अन्यत्र इस पुराण में सनकादि योगियों द्वारा महावराह भगवान की स्तुति कराई गयी है जिसमें उनहें विष्णु के रूप में वर्णित किया गया है।[25]

उक्त पुराण में एक स्थल पर पृथ्वी भगवान कृष्ण से कहती है कि वराह रूप धारण करके आपने मेरा उद्धार किया है।

(यदाहमुद् धृता नाथ त्वया सूकरमूर्तिना)[26]

वस्तुतः विष्णु के साथ वराह अवतार को जोड़ने की प्रवृत्ति तैत्तिरीय आरण्यक में ही वर्णित होने लगी थी।[27]

यही प्रवृत्ति महाभारत में नारायण एवं विष्णु के साथ वराह अवतार जोड़ने की मिलती है।[87]

इस प्रकार महाभारतकार ने प्रजापति ब्रह्या की अपेक्षा नाराण विष्णु के तादात्म्य को बहुत स्पष्ट रूप से स्थापित किया है। महाभारत वन पर्व में वराह अवतार के कारणों को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि एक बार पापियों के पाप भार से पृथ्वी रसातल में दब गयी बाद में पृथ्वी ने विष्णु से अपनी रक्षा की प्रार्थना की।[28]

पृथ्वी की प्रार्थना से प्रसन्न होकर विष्णु एकश्रृंगी विशालकाय महावराह का रूप धारण कर पृथ्वी को उसी सींग पर रखकर रसातल से ऊपर उठा लाये।[29]

सगृहीत्वा बसुमतीं श्रृंगेणैकेन भास्वता।

योजनानां शतं वीर समुद्धरति योक्षरः।।

शान्ति पर्व में वराह अवतार की एक बहुत ही विलक्षण कथा अख्यात है जो पुराणों में दुर्लभ है। इस कथा के अनुसार एक बार रसातल के राजा नरकासुर और उसके दानव अनुयायीगण अत्यधिक शक्तिशाली एवं आततायी हो गए, देवताओं ने ब्रह्या जी से इस बात के लिए निवेदन किया देव एवं ब्रह्या जी ने विष्णु से नरकासुर से जीवों के बचाव के लिये प्रार्थना की। विष्णु ने तदनन्तर ऐ महावरा का रूप धारण किया और रसातल में जाकर नरकासुर एवं उनके अनुयायियों को अपने खुरों से कुचल डाला। थोड़े अन्तर के साथ महाभारत के वनपर्व के अध्याय 143 में वर्णित कथा के अनुसार इन्द्र एवं अन्य देवों की रक्षा के लिए विष्णु को नरकासुर का वध करते हुए वर्णित किया गया है। ज्ञातव्य है कि पुराणों में नरकासुर वध की कथा विष्णु के साथ न जुड़कर कृष्ण के साथ जोड़ कर वर्णित मिलती है।

प्रारम्भिक पुराणों में मत्स्य पुराण को बहुत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इस पुराण में अध्याय 246–47 में विष्णु को वराह के रूप में अवतार लेकर पृथ्वी के उद्धार की कथा विस्तारपूर्वक वर्णित की गयी है। इसमें आख्यात है कि सृष्टि की रचना के समय विशालकाय पर्वतों के भार से तााि विष्णु के प्रतिम तेज को धारण करने में असमर्थ होने के कारण पृथ्वी धीरे–धीरे नीचे की ओर धंसने लगी। अपनी इस असहाय स्थिति को देखकर पृथ्वी ने विष्णु से रक्षा की प्रार्थना किया। उसकी प्रार्थना से प्रसन्न होकर विष्णु ने विशालकाय श्यामलवर्ण के महावराह रूप को धारण करके उसे अपनी दाढ़ों पर स्थिर कर दिया। इस पुराण में विष्णु की स्तुति में पृथ्वी ने विष्णु के एक अन्य गोविन्द की व्याख्या करती हुई कहती है कि आप इस प्रकार असाहय गो (पृथ्वी) का बिन्दन (प्राप्ति) करने के कारण गोविन्द नाम से विश्रुत हैं–

"युगे युगे प्रनष्टां गां विष्णो विन्दसि तत्वतः।

गोविन्देति ततो नाम्नां प्रोच्यसे ऋषि भिस्तथा।"[30]

भागवद पुराण में वर्णित कथा के अनुसार रसातल में डूबी हुयी पृथ्वी के उद्धार के लिए वराह का अवतार हुआ था।[31]

इस पुराण के तृतीय स्कन्द के 13 वें अध्याय में वर्णन मिलता है कि प्रलयकाल में जल में मग्न पृथ्वी को निकालने की चिंता में डूबे हुए ब्रह्या जी के नासिका छिद्र के अंगूठे के पोर के बराबर एक लघुकाय वराह शिशु उत्पन्न हुआ। देखते–देखते वह शिशु विशालकाय हाथी के समान बडत्रा हो गया–

इत्यभि ध्यायतो नासाविवरात्सहसानध।

वराह तोको निरगादगष्ठ षरिमाणकः।।

तस्याशि पश्यः स्वस्थ क्षणेन किल भारत।

गजमात्रः प्रववृधे तद्दभुतमभून्महत्।[32]

वराह रूप को इस प्रकार हाथी के समान विशालकाय देखकर सनकादि ऋषि आश्चर्य चकित रह गए। इस बीच भगवान वराह पर्वताकार रूप धारण करके अत्यन्त भीषण स्वर में गरजने लगे। ऋषिगण भयभीत होकर उनकी स्तुति करने लगे। उनकी स्तुति से प्रसन्न होकर भगवान एक बार पुनः गरजे तथा महा प्रलय जल में प्रवेश कर गए।[33]

भागवद पुराण में वराह विष्णु के शरीर का बहुत काव्यात्मक वर्णन किया गया है। महावराह का शरीर अत्यन्त कठोर था उनके कड़े–कड़े बाल थे, सफेद दाढ़ें थी तथा लाल–लाल दोनों आंखों से तेज निकल रहा था। इस प्रकार से शोभायमान होते हुए वे प्रलय समुद्र में स्वच्छन्दता पूर्वक विचरण करने लगे–

उत्क्षिप्त बालः खचरः कठोरः सटाविधुम्वन खररोमशत्वक्।

खुराहताभ्रः सितदंष्ट्रईक्षा ज्योतिर्ब भासे भगवानन्महीध्रः।।[34]

भगवद् पुराण में महावराह विष्णु द्वारा मारे जाने वले दैत्य का नाम हिरण्याक्ष मिलता है। इसे महाशक्तिशाली दैत्य हिरण्यकश्यप का भाई बताया गया है जिसने अपने दिग्विजय अभियान में रसातल से पृथ्वी को लेकर बाहर निकलते हुए विष्णु से युद्ध करने के लिए उनका मार्गविरोध किया था। इस पुराण के 18 वें अध्याय में हिरण्याक्ष एवं वराह विष्णु के बीच हुए भीषण संग्राम का बड़ा रोचक वर्णन है। ज्ञातव्य है कि महाभारत की कथा में महावराह विष्णु के साथ हिरण्याक्ष के युद्ध का वृत्तांत उल्लिखित नहीं है। परन्तु महाभारत के खिल अंश में इस दैत्य का नाम उल्लिखित मिलता है।[35]

ब्रह्म पुराण[36] में वराह विष्णु के अवतार की एक दूसरी कथा मिलती है। इसके अनुसार एक बार सिन्धुसेन नामक एक दैत्य यज्ञ को लेकर रसातल में छिप गया। यज्ञ के अभाव में देवता आदि प्राणी क्रमशः क्षीणशक्ति होने लेग। देवों ने परमदेव विष्णु से प्रार्थना की। विष्णु ने वराह रूप धारक करके रसातल में प्रवेश किया तथा सिन्धुसेन का वध करके यज्ञ को पुनः देवताओं को प्रदान किया–

स वराहवपुः श्रीमान रसातल निवासिनः

राक्षसान् दानवान् हत्वा मुखे धृत्व महाध्वरम्।

निश्चकाम रसातलात।।[37]

इस प्रकार प्रजापति के वराह अवतार से विष्णु के वराह अवतार के बीच दोनों देवों के नाराण विशेषण को कथा के स्थानान्तरण का माध्यम मान सकते हैं। पुराणों में नारायण विशेषण सर्वाधिक विष्णु के साथ प्रयुक्त मिलता है। फलतः नारायण विशेषण के माध्यम से वराह अवतार क्रमशः विष्णु के साथ जुड़ता चला गया। वस्तुतः नारायण को स्वयंभू के रूप में तथा सृष्टि के विकास के नायक के रूप में सबसे महत्वपूर्ण स्थापना मत्स्य पुराण में मिलती है। इसमें कहा गया है कि उन्होंने महाप्रलय के बाद सबसे पहले तो जल का निर्माण किया फिर उसमें बीज का निक्षेपन किया जो बाद में हिरण्यमय अण्ड के रूप में तैयार हो गया तब आत्मसंभव भगवान उसमें प्रविष्ट हो गये। उसमें प्रविष्ट अथवा व्याप्त होने के कारण ही नारायण से विष्णु हो गया–

प्रविश्यान्तर्महातेजाः स्वयमेवात्मसंभवः।

प्रभावादपि तद्व्याध्या विष्णुत्वमगमत् पुनः।।[38]

मनुस्मृति में नारायण का अर्थ बताते हुए स्पष्ट किया गया है कि नाराण विष्णु के निवास स्थल अर्थात् अयन हैं–

आयोनारा इति प्रोक्ता वै नरसूनवः।

ता यदस्यायनं पूर्व तेन नारायण स्मृतः।[39]

ध्यातव्य है कि वायु पुराण एवं विष्णु पुराण में भी मने के ही मत का समर्थन किया।[94]

मत्स्य पुराण में नारायण को स्वयंभू कहा गया है जो ब्रह्मा का विशेषण है। तथा संसार के सृष्टिकर्ता परम पुरुष का द्योतक हैं पौराणिक भावना में हिरण्यमय अण्ड में भगवान नारायण को प्रविष्ट कराकर तथा उस अण्ड से सम्पूर्ण जगत की सृष्टि कराकर विष्णु को परम पुरुष नारायण तथा विस्तार करने वाला विष्णु कहा गया है। कुषाण काल के उपरान्त अथवा गुप्तकाल में नारायण एवं विष्णु परस्पर अभिन्न माने जाने लगे थे। वैष्णव धर्म में पांचरात्रिक उपासना जो वासुदेव कृष्ण को नायक देवता के रूप में नारायण के साथ एकीकरण होकर विकसित हुआ था आगे चलकर विष्णु का ही विशेषण बन गया। महाभारत के नारायणी खण्ड में नारायण विष्णु के अवतारों की वृहद् सूचना प्राप्त होती है।[40]

महाभारत एवं पुराण दोनों ग्रन्थों की शुरूआत नाराण की सर्वप्रथम प्रार्थना से शुरू की गयी है जिसे नरोत्तम कहा गया है–

"नारायणं नमस्कृत्य नरंचैव नरोत्तम"[41]

आदि शंकराचार्य ने नाराण शब्द की व्याख्या परमेश्वर के अर्थ में किया है। लगभग 8 वीं सदी में रचित त्रिपाद्विभूति महानारायण उपनिषद में नारायण को सृष्टि का मूल कर्ता तथा परमेश्वर कहा गया है।[42]

वराह के साथ पृथ्वी के उद्धार की कथा का मूल प्रयोजन क्या रहा होगा। इस सम्बन्ध में विद्वानों के अलग–अलग मत हैं– खोण्डा[43] ने इस सम्बन्ध में विचार करते हुए कहा कि वराह के मुण्डाग्र से मिट्टी का खोदा जाना हल द्वारा क्षेत्र कर्षण का प्रतीक माना जा सकता है। जिससे भूमि में उर्वरा शक्ति बढत्रती है। इस प्रकार वराह का पृथ्वी उर्वरा शक्ति से सम्बन्ध जोड़ा जा सकता हैं पृथ्वी की उर्वरा शक्ति को प्रतीकात्मक ढंग से प्रजापति ब्रह्मा के साथ भी जोड़ा जा सकता है जिन्हें शतपथ ब्राह्मण में पृथ्वी का पति कहा गया है। आगे चलकर विष्णु को भागवद् पुराण[44] एवं विष्णु पुराण[45] में

पृथ्वी का पति स्वीकार किया गया है। इतनी ही नहीं विष्णु पुराण में नरकासुर के वध के उपरान्त पृथ्वी कृष्ण से यह रहस्य प्रगट करती है कि नरकासुर कृष्ण (विष्णु) का ही पुत्र था वह गर्भस्थ तब हुआ था जब पूर्वकाल में विष्णु ने वराह रूप धारण करके पृथ्वी का उद्धार किया था।[46]

इस वृत्तांत को विस्तारपूर्वक कालिका पुराण अध्याय 30 में भी प्रस्तुत किया गया है। पृथ्वी ने विष्णु से यह भी का कि आपने मेरा भार उतारने के लिए वराह रूप अवतार ग्रहण किया था।[47]

मत्स्य पुराण[48] में वराह विष्णु की प्रतिमा निर्माण का विशद् उल्लेख किया गया है। इसमें कहा गया है कि वह वराह विष्णु के हाथों में पद्म और गदा हैं उनके दाढ़ों के आधे भाग अतितीक्ष्ण हों, थूथुन मुक्त मुख हो, बायीं कुहनी पर पृथ्वी हो व पृथ्वी इसे दाढ़ के अग्रभाग पर स्थापित की हुयी कमलयुक्त तथा शान्त हो, उसका मुख विस्मय से उत्फुल्ल हो ऐसी मूर्ति को ऊपर की ओर निर्मित किया जाना चाहिए। इस पुराण, आगे कहा है कि उस मूर्ति का दाहिना हाथ कटि प्रदेश पर हो उनका एक पैर शेषनाग के मस्तक पर दूसरा पैर कच्छप पर स्थित हो। सभी लोकपाल उनकी स्तुति करते हुए प्रदर्शित किए गये हों ऐसी मूर्ति बनाने का विधान विहित है–

महावराहं वक्ष्यामि पद्महस्तं गदाधरं।
तीक्ष्णदेष्ट्राग्रघोणास्यं मेदिनी वामकूर्परम्।।
द्वष्टाग्रेघोद्धतां दान्तां धरणीमुत्पलान्विताम्।
विस्मयोफुल्लवदनामुपरिष्टात् प्रकल्पयेतु।।
दक्षिणं कटिसंस्थं तु करं तस्याः प्रकल्पयेत्।
कूर्मोपरि तथा पादमेकं नगेन्द्र मर्धनि।।
तस्तूयमानं लोकेशैः समन्तात्परिकल्पयेत्।

विष्णु पुराण में वराह विष्णु को विश्व को व्याप्त करने में समर्थ तेजयुक्त तथा कल्याण्कर्ता कहा गया है।[49]

विश्व का यह ज्ञापक स्वरूप यज्ञ वराह का स्वरूप माना जा सकता है। जिसमें वराह विष्णु को विश्व रूप में प्रदर्शित किया जाता है।

विष्णु धर्मोत्तर पुराण में वराह की प्रतिमा को अनेक रूपों में निर्मित करने का विधान दिया गया है। इस पुराण में निर्दिष्ट है कि नृवराह विष्णु रूप को मूर्त निर्माण करते समय शेषनाग सहित बनाना चाहिये। शेषनाग को[50] भुजाओं से युक्त मूर्तित करना चाहिए जिसमें नीचे के दोनों हाथ अंजलि बद्ध मुद्रा में हों तथा ऊपर के दोनों हाथ क्रमशः हल और गदा दिखाया जाना चाहिए।[51]

इस प्रकार विष्णु धर्मोत्तर पुराण में नृवराह की प्रतिमा के निर्माण के सम्बन्ध में वराह की मूर्ति के साथ शेषनाग की मूर्ति का बनाया जाना आवश्यक बताया गया है। शेष नाग के फण को रत्नजड़ित बनाने तथा उनकी आंखें विस्मय से युक्त पृथ्वी को निहाती हुयी होनी चाहिये।

शेषनाग के पृष्ठ पर आलीढ़ मुद्रा में वराह विष्णु को स्थित दिखाया जाना चाहिए। देवता की बायीं कुहनी पर नारी रूप में दो भुजा युक्त पृथ्वी को अंकित करना चाहिए जिसके हाथ अंजलि बद्ध मुद्रा में जुड़े हुए हों।

देवता के जिस हाथ में बसुन्धरा प्रदर्शित की जाय उसी हाथ में शंख भी धारण कराना चाहिए तथा शेष हाथों में पद्म चक्र और गदा धारण कराना जाना निर्दिष्ट किया गया है।

विष्णु धर्मोत्तर पुराण में नृवराह विष्णु के अंकन का एक अन्य स्वरूप भी निर्दिष्ट किया है। इस रूप में कहा गया है कि, दैत्य हिरण्याक्ष भगवान वराह की ओर त्रिशूल ताने क्रोध की मुद्रा में खड़ा दिखाया जाना चाहिए तथा भगवान को अपने चक्र से उसका सिर काटने को उद्यत अंकित किया जाना चाहिए।

हिरण्याक्षशिरच्छेयश्व क्रोद्यतकरोऽथवा।
शूलाद्यतहिरण्याक्ष सम्मुखो भगवान्भवतेत्।।[52]

पृथ्वी को उद्धार करते हुए तथा उसे धारण करने के रूप में वराह विष्णु को दो रूपों में प्रदर्शित करने का विधान विष्णु धर्मोत्तर पुराण में वर्णित है।

प्रथमतः देवता का सम्पूर्ण शरीर मनुष्य की तरह निर्मित किया जाता है परन्तु उनका मुख वराह (सूकर) की भांति बनाया जाता है। इस रूप में उनहें क्रोधावेग से भरे दानवों के मध्य स्थित अंकित किया जाना चाहिए।

समग्रकोऽरूपो वा बहुदानवमध्यमः।
नृवराहो वराहो वा कर्तव्यः क्ष्माविधारणे।।[53]

द्वितीयतः विष्णु को केवल वराह रूप में ही मूर्तित किया जाना चाहिए।

(नृवराहो वराहो वा कर्त्तव्यः क्षमाविधारणे)।

ज्ञातव्य है कि केवल वराह रूप में विष्णु की प्रतिमा निर्माण का निर्देश विष्णु तथा भागवद् पुराणों में भी दिया गया है।

ऐश्वर्य योगोद्धतसर्वलोकः कार्योऽनिरूद्धो भगवान्वराहः

रूद्रा न यस्य क्वचिदेव शक्तिः समस्त पापापहरस्य राजन।।[54]

विष्णु धर्मोत्तर पुराण में एक अन्य प्रकार से नृवराह प्रतिमा विधान वर्णित है। इसमें नृवराह दो भुजा युक्त दोनों हाथों से पृथ्वी को पकड़े हुए तथा कपिलमुनि के समान ध्यानावस्थित मुद्रा में मूर्तित किए जाने का विधान प्रस्तुत किया गया है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ऋग्वेद – 1.61.7
2. वही – 8.77.10
3. दृष्टव्य – मैकडानल : वैदिक मैथालजी पृ. 43 तथा 151
4. तैत्तिरीय संहिता – 7.1.5.1
5. तैत्तिरीय संहिता – 7.1.5.1
6. तैत्तिरीय ब्राह्मण 1.1.3.5 तथा 6
7. तैत्तिरीय आरण्यक – 1.10.8
8. महानारायणी उपनिषद – 4.5
9. पद्मपुराण सृष्टि खंड – 20.156
10. खोण्डा जे. – आस्पेक्ट्स ऑफ अरली विष्णुइज्म, पृ. 139
11. दृष्टव्य तैत्तिरीय संहिता – 6.2.4.2 तथा 7.1.5.1
12. महा. वही – 126.12
13. वायु पुराण – 6.1.14
14. वायु पुराण 6.1.15
15. शतपथ ब्राह्मण 12.3.4.1, 13.6.11 तथा 13.6.2.12
16. वही – 3.1.1.8
17. ऋग्वेद – 1.90.2
18. वही – 10.121.1
19. विष्णु पुराण – 1.4.1
20. वही – 1.4.15
21. लिंग पुराण – 1.4.59.61 तथा पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अध्याय 3 तथा विष्णु पुराण – 1.4.1
22. विष्णु पुराण – 1.4.9–10
23. ब्रह्माण्ड पुराण 1.5.1–13
24. वही – 1.5.12–44
25. वही – 5.29.23
26. तैत्तिरीय आरण्यक 101 पृ. 701
27. महाभारत सभा पर्व अध्याय 38, वनपर्व 143. 45–47 एवं शान्ति पर्व अध्याय 339, वनपर्व 272–51–55 तथा शान्तिपर्व 209.16–30
28. वही वनपर्व 143.39–40
29. वही वन पर्व 143–45–47
30. मत्स्य पुराण 247.43
31. भागवद पुराण 13.7
32. श्री मदभागवद् – 3.13.18–19
33. वही – 3.13.26
34. वही – 3.13.27
35. ब्रह्म पुराण – 79.7.20
36. वही – 79.7.811.12.14.16
37. मत्स्य पुराण 2.25–30
38. मनुस्मृति – 1.10
39. भण्डारकर आर. जी. वैष्णविजम शैवविजम एण्ड अदर माइनर सेक्स पृ. 43
40. महाभारत 12.326.72 वही 337.36
41. जे. खोण्डा–प्रास्पेक्टस ऑफ अरली विष्णुइजम पृ. 132.33
42. भागवद् पुराण 3.13.42
43. विष्णु पुराण 5.29
44. वही – 5.29.23, 24
45. मत्स्य पुराण अध्याय 260–28, 29, 30
46. विष्णु पुराण – 1.4.37
47. विष्णु धर्मोत्तर पुराण 30, 790,1
48. वही 3.79.3
49. वही – 3.79.4
50. विष्णु धर्मोत्तपुराण – 3.79.6
51. वही – 3.79.7
52. विष्णु धर्मोत्तर पुराण 3.79–9
53. वही – 3.79–10
54. वही – 3.79.11

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

वर्तमान संदर्भ में जीवन कौशल शिक्षा

डॉ. मीनू अग्रवाल
वरिष्ठ व्याख्याता, श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर
श्रीमती सुमन शर्मा
शोधार्थी

प्रस्तावना :– जीवन कौशल शिक्षा मनुष्य की वे मूलभूत चारित्रिक विशेषताएं हैं जो न केवल उसे समाज में समायोजन करना सिखाती है, अपितु स्वयं की क्षमताओं को पहचानकर उन्हें अपनी एक पहचान बनाने योग्य भी बनाती है।

जीवन कौशल शिक्षा का सम्प्रत्यय अस्सी के दशक में अस्तित्व में आया। इसके माध्यम से विभिन्न मनोसामाजिक विचारकों ने समाज के उपेक्षित व मनोशारीरिक रूप से असक्षम बालकों को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का प्रयास किया। जीवन कौशल शिक्षा दैनिक जीवन की व्यक्तिगत व सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। यह समस्या समाधान की क्षमता एवं जीवन जीने योग्य आवश्यक कुशलताओं का विकास करती है।

जीवन कौशल शिक्षा की अवधारणा को साकार रूप (फ्रेम) देने का कार्य 1993 में विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) द्वारा किया गया। WHO ने ''विद्यालय में बालकों एवं किशोरों के लिए जीवन कौशल शिक्षा'' (Life Skill Education for Children and Adolescents in School) दस्तावेज के द्वारा जीवन कौशल शिक्षा को प्रायोगिक रूप से विद्यालय पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने के लिए फ्रेमवर्क तैयार किया। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार ''जीवन कौशल अनुकूलनात्मक व सकारात्मक व्यवहार की वे योग्यताएं हैं, जो व्यक्तियों को दैनिक जीवन की मांगों और चुनौतियों से प्रभावपूर्ण समायोजन करने योग्य बनाती है।''

गिन्टर के अनुसार, ''जीवन कौशल शिक्षा अनिवार्य रूप से मानव अस्तित्व के बुनियादी विकास भवन के ब्लॉकों का प्रतिनिधित्व करती है।''

WHO के अनुसार जीवन कौशल दस प्रकार के होते हैं – 1. स्वजागरूकता, 2. परानुभूति 3. संवेगों का सामना करना, 4. दबाव का सामना करना, 5. निर्णय लेना, 6. समस्या समाधान क्षमता, 7. सृजनात्मक चिन्तन, 8. विवेचनात्मक चिन्तन, 9. प्रभावपूर्ण सम्प्रेषण, 10. अर्न्तवैयक्तिक सम्बन्ध।

1. **स्वजागरूकता –** स्वजागरूकता से तात्पर्य स्वयं की पहचान, चरित्र, गुण, अवगुण, इच्छाओं और नापसंद के प्रति जागरूकता से है। स्वयं के महत्व को समझने व जिन अक्षमताओं को हम परिवर्तित नहीं कर सकते, उन्हें स्वीकार कर उपलब्ध संसाधनों द्वारा तनाव, कुण्ठा से मुक्त होकर स्वयं के व्यक्तित्व के विकास से है। स्वजागरूकता तनाव व दबावपूर्ण परिस्थितियों में प्रभावी संचार और पारस्परिक सम्बन्धों के लिए सहानुभूति विकसित करने के लिए आवश्यक शर्त है।

2. **परानुभूति –** परानुभूति स्वयं को पीड़ित के स्थान पर रखकर उसके दृष्टिकोण से स्थिति को देखने व समझने की सामर्थ्य है। यह स्वयं के अनुभवों को महत्व दिए बिना दूसरों के उद्देश्यों व भावनाओं को अनुभूत करना है। यह अनुभूति जातीय व सांस्कृतिक विविधता की स्थितियों में देखभाल व सहिष्णुता की आवश्यकता वाले व्यक्तियों के प्रति सकारात्मक व्यवहार को प्रोत्साहित करती है।

3. **संवेगों का सामना करना –** संवेगों का सामना करने से तात्पर्य भावनाओं के प्रदर्शन व दूसरों की व्यवहारगत प्रदर्शित भावनाओं की समझ से है। ईर्ष्या, क्रोध, आवेश जैसे संवेग न केवल हमारे स्वास्थ्य अपितु व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। स्नेह, सहानुभूति, दया, सहयोग, त्याग जैसे संवेग व्यक्तित्व के सकारात्मक पक्ष व मानसिक दृढ़ता को विकसित करते हैं।

4. **दबाव का सामना करना –** तनाव या दबाव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालता है, अतः इससे राहत पाने के लिए दबाव के कारणों को समझकर उन पर नियंत्रण करना सीखना होगा। इसके लिए प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करने के लिए

मानसिक रूप से दृढ़ बनने की आवश्यकता है, जिससे बालक तनाव पर नियंत्रण कर सही निर्णय ले सके।

5. **निर्णय लेना** – सही समय पर सही निर्णय लेना जीवन को उन्नति के सोपान पर ले जाता है, अतः इसके लिए प्रत्येक बालक को समस्या के समस्त पक्षों का जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों के संदर्भ में विश्लेषण कर समस्या समाधान हेतु उपलब्ध विकल्पों में से सही का चयन करना निर्णय क्षमता कहलाता है। बालक को उचित व अनुचित का अन्तर ज्ञात होना आवश्यक है।

6. **समस्या समाधान क्षमता** – जीवन की अहम् समस्याएं समाधान न होने की स्थिति में मानसिक दबाव और शारीरिक कष्ट का कारण बनती है।अतः जीवन में आने वाली समस्याओं के प्रति सकारात्मक रहते हुए उनके समाधान का प्रयास करने का कौशल बालक में विकसित करना आवश्यक है।

7. **सृजनात्मक चिन्तन** – सृजनात्मक चिन्तन से निर्णय लेने व समस्या के समाधान में सहायता मिलती है। इस कौशल से नये विकल्पों की खोज की जा सकती है। सृजनात्मक चिन्तन प्रत्यक्ष अनुभवों से परे जाने की क्षमता का विकास करता है, यह हमारे अन्दर रचनात्मक चिन्तन व सकारात्मक दृष्टि को विकसित करता है।

8. **विवेचनात्मक चिन्तन** – यह सूचनाओं एवं अनुभवों को वस्तुपरक रूप से विश्लेषण करने की क्षमता का विकास करता है। विवेचनात्मक चिन्तन के आधार पर हम व्यक्ति को प्रभावित करने वालेकारणों की पहचान व आंकलन कर सकते हैं जो हमारे विकास को प्रभावित करते हैं, इनमें मूल्य, साथियों का दबाव व मीडिया आदि है।

9. **प्रभावी सम्प्रेषण** – प्रभावी सम्प्रेषण से अभिप्राय स्वयं की अभिव्यक्ति प्रस्तुत करना है। इस हेतु हम अपनी संस्कृति व स्थितियों के अनुरूप शाब्दिक व अशाब्दिक प्रविधियों को प्रयुक्त कर सकते हैं। इसके अन्तर्गत अपनी राय, इच्छायें, आवश्यकताएं व संवेग अभिव्यक्त किये जाते हैं।

10. **अर्न्तवैयक्तिक सम्बन्ध** – अन्तवैर्यक्तिक सम्बन्ध का अभिप्राय दूसरों से सम्बन्ध बनाना हैं, जो कि हमारी मानसिक व सामाजिक गुणवत्ता के लिए महत्वपूर्ण है। इसके अन्तर्गत परिवार के सदस्यों से अच्छे सम्बन्ध बनाना, सामाजिक समर्थन एवं अन्तः सम्बन्धों का सकारात्मक रूप से निर्वहन करना भी सम्मिलित है।

भारत में शैक्षिक गुणवत्ता पर जोर देते हुए 1986 की शिक्षा नीति के अन्तर्गत कई शैक्षणिक परिवर्तन किये गये एवं पाठ्यक्रम व शिक्षण प्रक्रिया को बालक केन्द्रित बनाया गया। इसी श्रृंखला में ''राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005'' व ''2009'' में शिक्षा के निर्धारित उद्देश्यों से जीवन जीने के लिए आवश्यक कुशलताओं के विकास की बात कही गई है।

CBSE बोर्ड ने भी जीवन कौशल शिक्षा को अपने पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने की आवश्यकता समझी तथा 2005 में CBSE ने इसके लिए परिपत्र प्रस्तुत किया। राजस्थान राज्य देश का प्रथम राज्य बना जहां 2006 में 11वीं कक्षा के पाठ्यक्रम में जीवन कौशल शिक्षा को सम्मिलित किया गया व शिक्षकों को इसके लिए प्रशिक्षण दिया गया। वर्तमान में राजस्थान में सतत् व व्यापक मूल्यांकन प्रक्रिया में सहसंज्ञानात्मक क्षेत्र में जीवन कौशल आधारित मूल्यांकन किया जा रहा है।

जहां एक ओर सरकार जीवन कौशल शिक्षण की दिशा में कदम उठा रही है वहीं दूसरी ओर विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट प्रदर्शित कर रही है कि अकेले भारत में 2019 में विश्व के सापेक्ष आत्महत्या करने वाले युवाओं की दर 17.2% है। इसमें महिला आत्महत्या प्रतिशत के अनुसार विश्व में भारत का छठा व पुरुष प्रतिशत के अनुसार 22वां स्थान है।

2019 की 'हिन्दुस्तान टाईम्स' की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में हर घण्टे में एक विद्यार्थी आत्महत्या करता है। इसी प्रकार विश्व प्रसन्नता सूचकांक के आंकड़ों से स्पष्ट है कि भारत में प्रसन्नता व सकारात्मक चिन्तन का स्तर निरतर गिरता जा रहा है। सन् 2013 में विश्व में भारत का प्रसन्नता में इण्डेक्स में 111वां, 2017 में 122वां व मार्च 2018 में 156 देशों की सूची में 133वें स्थान पर आ गया है। राजस्थान के संदर्भ में देखें तो भारत के 23 राज्यों में 17वां स्थान है।

ऐसी स्थिति में वर्तमान परिदृश्य का अवलोकन करने पर चिन्तन व मनन के फलस्वरूप कुछ प्रश्न मस्तिष्क पटल पर उभरकर आते हैं –

1. क्या जीवन कौशल शिक्षण प्रभावी ढ़ंग से दिया जा रहा है ?

2. जीवन कौशल शिक्षण का प्रारम्भ शिक्षा के किस स्तर से प्रारम्भ किया जाना चाहिए ?

3. जीवन कौशल शिक्षण का स्वरूप कैसा होना चाहिए ?

प्राथमिक स्तर पर जीवन कौशल शिक्षा की आवश्यकता सीखने के लिए सबसे उपयुक्त काल बाल्यावस्था को माना गया है। 6–12 वर्ष की अवस्था में बालक जो सीखता है वो उसके भावी जीवन का निर्माण करता है। आज युवा पीढ़ी में नकारात्मक चिन्तन, तनाव, द्वन्द्व, हारकर गलत दिशा में बढ़ने की प्रवृत्ति का विकास हो रहा है। इसका कारण वस्तुतः उसे बाल्यावस्था में उचित शिक्षा का नहीं मिल पाना ही है, यदि हम बालक को बाल्यावस्था में ही सही दिशा प्रदान करें, उसमें जीवन जीने के लिए आवश्यक दक्षताओं का विकास करे तो बालक किशोरावस्था के तनाव व द्वन्द्व से लड़ पायेगा। उसमें नकारात्मक चिन्तन से सकारात्मक चिन्तन, निराशा, हीनता व कुण्ठा के कारण उत्पन्न अक्रियाशीलता के स्थान पर कर्मण्यता, बदलते सामाजिक परिवेश व अभूतपूर्व तकनीक विकास के दुष्परिणाम स्वरूप उत्पन्न एकाकी, विनाश की प्रवृत्ति एवं अहं के स्थान पर सामाजिक समायोजन व सृजनात्मकता की प्रवृत्ति का विकास हो सकेगा।

परन्तु बाल्यावस्था में बालक के मस्तिष्क (समझ) का इतना विकास नहीं हो पाता कि पुस्तकीय ज्ञान को समझकर वह उसे व्यवहार में ला पाये, अतः हमें बालक को जीवन कौशल शिक्षा प्रदान करने की शिक्षण विधि में परिवर्तन करना होगा व जीवन कौशल शिक्षा को पाठ्यक्रम की अपेक्षा शिक्षण प्रक्रिया का अभिन्न अंग बनाना होगा।

प्राथमिक स्तर पर जीवन कौशल शिक्षा के प्रभावी शिक्षण हेतु सुझाव :– प्राथमिक स्तर पर जीवन कौशल शिक्षा को बाल मनोविज्ञान आधारित बनाते हुए वर्तमान तकनीकी से जोड़ना होगा व जीवन कौशलों के प्रभावी विकास हेतु पूर्णाकारवाद सिद्धान्त के स्थान पर खण्ड शिक्षण को महत्व देना होगा।

प्राथमिक स्तर पर दस जीवन कौशलों को दो वर्गों में विभक्त करसिखाना चाहिए, अर्थात1. कक्षा प्रथम से तृतीय तक – स्वजागरूकता, सृजनात्मकता, अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध, परानुभूति, संवेगों का सामना करना। 2. कक्षा चतुर्थ व पंचम में शेष पांचों जीवन कौशल यथा निर्णय लेना, दबाव का सामना, समस्या समाधान क्षमता, विवेचनात्मक चिन्तन एवं प्रभावपूर्ण सम्प्रेषण का शिक्षण करना चाहिए।

जीवन कौशल शिक्षा को पृथक से सिखाने के स्थान पर पाठ्यक्रम में समावेशित करना चाहिए, जैसे–

- **हिन्दी शिक्षण में जीवन कौशल आधारित कहानियों का समावेश।**
- स्वयं, परिवार व समाज से सम्बन्धित विषयों पर कक्षा स्तरानुसार वाद–विवाद व निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन।
- तुकबंदी व कविता गायन प्रतियोगिताएं करवाना, जो किसी न किसी जीवन कौशल का प्रतिनिधित्व करती हो।
- **सामाजिक शिक्षण में –** विद्यालय, गांव, शहर, समाज से सम्बन्धित विषयों पर बालसभा व कक्षा शिक्षण में बालकों को विचार अभिव्यक्ति का अवसर देना।
- भाषण प्रतियोगिता करवाना।
- सोशल मीडिया व इन्टरनेट का प्रयोग कर सामाजिक विकास से सम्बन्धित प्रेरक प्रसंगों से अवगत कराना।
- नये–नये फूल–पौधों, पत्तियों व चिड़िया के पंखों के संग्रहण व नवीन वस्तुओं के सृजन हेतु प्रेरित करना।
- मिट्टी के नवीन खिलौने बनवाना व रचनात्मक विकास से सम्बन्धित प्रतियोगिताएं आयोजित कर पुरस्कृत करना।
- वृक्षारोपण के द्वारा उत्तरदायित्व व स्वजागरूकता के भावों का विकास।

गणित व विज्ञान शिक्षण में–

- विभिन्न शिक्षण विधियों जैसे समस्या समाधान, आगमन–निगमनविधि, प्रश्नोत्तर विधि में – पहेली बूझना, वर्ग पहेली भरना आदि का प्रयोग कर बालक के विवेचनात्मक चिन्तन का विकास व अतिरिक्त ऊर्जा का सदुपयोग करना।
- सोशल मीडिया व इन्टरनेट का प्रयोग करते हुए बालकों को नवीन वैज्ञानिक खोजों व आविष्कारों की जानकारियां देना, जिससे उनमें रचनात्मक वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास एवं जिज्ञासु प्रवृत्ति का विकास किया जा सके।

- प्रायोगिक कक्षा शिक्षण द्वारा बालक की क्रियाशीलता में वृद्धि करना।
- **खेल कालांश में** दल भावना एवं कुशल नेतृत्व का विकास करने के लिए समूह खेलों को अधिक प्रोत्साहन देना जिससे बालक समायोजन करना सीख सकें।
- सकारात्मक प्रतिस्पर्द्धा की भावना का विकास हो सके।
- दृढ़ अर्न्तसम्बन्ध बनाना सीख सके।
- मानसिक तनाव/दबाव का सामना करना सीख सके।
- कक्षा शिक्षण में ऐसी काल्पनिक परिस्थितियों का निर्माण करना जिससे बालक में समस्या समाधान व निर्णय क्षमता का विकास हो सके।

शिक्षक की भूमिका :–

- वर्तमान समय में परिवारों का स्वरूप एकाकी होने के कारणबालक के व्यक्तित्व के विकास व निर्माण के संदर्भ में विद्यालय व शिक्षकों का दायित्व व महत्व अधिक हो गया है।
- शिक्षकों द्वारा बालकों के लिए विद्यालय में सकारात्मक व स्व–अनुशासनात्मक वातावरण का निर्माण किया जाना चाहिए।
- बालकों को कक्षा शिक्षण में विचाराभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रदान करनी चाहिए।
- बालकों को स्नेह व सम्मान के साथ ज्ञानार्जन का अवसर प्रदान करना चाहिए।

परिवार की भूमिका :– अशान्ति व संघर्ष के वातावरण में बालक में नकारात्मक चिन्तन का विकास होता है। अतः अभिभावकों का दायित्व है कि वे बालक को शांति, प्रेम व स्नेहमय वातावरण प्रदान करें। बालक को स्वयं के विषय में छोटे–छोटे निर्णय लेने का अवसर प्रदान करना चाहिए। परिवार में बालक को अपने विचारों को अभिव्यक्त करने का पूर्ण अवसर मिलना चाहिए। छोटे–छोटे कार्यों के द्वारा उनमें उत्तरदायित्व के भाव का विकास किया जाना चाहिए। माता–पिता का कर्त्तव्य है कि बालक में सकारात्मक चिन्तन का विकास हो।

उपसंहार :– जीवन कौशल बालक को भविष्य में आने वाली चुनौतियों व समस्याओं के साथ सकारात्मक चिन्तन आधारित समाधानों के चुनाव व मानसिक दृढ़ता प्रदान करते हैं। अतः बालकों को भविष्य के साथ समुचित समायोजन योग्य बनाने के लिए हमें उनमें जीवन कौशलों का विकास करना होगा। इसमें विद्यालय, परिवार, समाज सभी की महत्वपूर्ण भूमिका है, जिसे संयुक्त रूप से सभी को मिलकर निभानी होगी। बालक समाज का भविष्य है, अतः समाज के उज्ज्वल भविष्य हेतु समाज में व्याप्त नकारात्मक चिन्तन व भय, अक्रियाशीलता, दबाव व संवेगों से संघर्ष हेतु बालकों को मानसिक व शारीरिक व सांवेगिक रूप से स्वस्थ बनाना होगा।

संदर्भ :–

1. TACADE (1990); Skill for the Primary School Child : Promoting the protection of Children, Salford, UK.
2. WHO/GPA (1994), School Health Education to Prevent AIDS and STD : A Resource Package for Curriculum Planners, World Health Organization/Global Programme on AIDS, Geneva.
3. Life Skills in Non-Formal Education, A Review Indian National Commission for Cooperation with UNESCO, Ministry of Human Resource Development and United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization, New Delhi.
4. WHO/MNH/PSE/93-7A Rev. 2, 1997 Life Skill Education for Children and Adolescents in Schools.
5. Mangrulkar, Leena, Cheryl Vince Whitman and Marc Parner, Life Skill Approach to Child and Adolescent Healthy Human Development", Pan American Health Organization.
6. Brains J., "Developing Entrepreneurial Life Skills", Innovations in Education and Teaching International, The Journal of the Staff and Educational Development Associaiton Routledge, Taylor and Francis Group, August 2006, Volume 43, Number 3.

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

भारतीय समाज एवं लैंगिक असमानता

साधना डण्डौतिया (शोधार्थी)

आज हम 21 वीं सदी में है और हमें भारतीय होने पर गर्व की अनुभूति होती है किन्तु यदि हम महिलाओं की बातें करें तो आज भी सर्वत्र लैंगिक भेदभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। जहाँ बेटा के जन्म को हर्षोउल्लास के साथ मिठाईयाँ बांटकर मनाया जाता है वहीं बेटी के जन्म पर मातम् सा छा जाता है। मोक्ष प्राप्ति के लिए लड़का होना बहुत ही महत्वपूर्ण हैं वहीं उससे ही परिवार तिरता है ऐसी मानसिकता का आज भी उतना ही महत्व दिया जाता है जितना कि पहले। इसके ही चलते छोटे गांव से लेकर बड़े–बड़े भाहरों लिंग भ्रूण परीक्षण के केन्द्र खुले है तथा ये पता चलने पर की भ्रूण मादा उसको मरवा देते हैं। यदि सौभाग्यवश जो बेटिंया मारी नहीं जाती है और जन्म ले लेती है वे परिवार में किसी न किसी रूप में भेदभाव का शिकार होती है। लड़कियों पर घरेलू हिंसा, दहेज की मांग, बलात्कार, हत्या इत्यादि की घटनाऐं हमें यह बताती हैं कि हम आज भी कितनी पिछड़ी सोच रखते हैं। जहाँ एक और हम स्त्री को देवी का स्वरूप मानते वहीं जन्म से पहले और बाद में उसी देवी को मारने व दुर्गती करने में पीछे नहीं है। पत्थर की मूर्ति को देवी बनाकर उसकी पूजा की जाती है वहीं दूसरी और जीवित देवी तुल्य स्त्री और परेशान का भोशण करने का और परेशान कोई मौका नहीं गवांते है। महिलाओं पर हो रहे अत्याचारों और शोषण में हमारी सामाजिक संरचना की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। ''मनु ने स्त्री को शारीरिक एवं नैतिक दृष्टि से दुर्बल माना नारी को सभी अवस्थाओं में रक्षा एवं सुरक्षा की आव यकता है अतः उन्हें स्वतंत्रता के योग्य नहीं समझा गया।'' अतएव स्पश्ट है की लिंग भेद की समस्या अब की नहीं प्राचीन समय से ही चली आ रही हे। अथर्ववेद में कहा गया है कि ''स्त्री को बाल्यावस्था में पिता के, युवावस्था में पति के वृद्धावस्था में पुत्र के अधीन होना चाहिए।'' महिला प्रत्येक अवस्था किसी न किसी रूप में पुरूष के अधीन रहें। लिंग असमानता एक विश्वव्यापी समस्या है।

लैंगिक असमानता का तात्पर्य लैंगिक आधार पर महिलाओं के साथ हो रहे भेदभाव से है। लिंग एक सामाजिक–सांस्कृतिक शब्द है, इसे सामाजिक परिभाषा से संबंधित करते हुये समाज में पुरूषों और महिलाओं के कार्यों और व्यवहारों के रूप में परिभाषित करता है, जबकि सेक्स जेण्डर शब्द आदमी और औरत को परिभाषित करता है। जो एक जैविक और सांस्कृतिक पहलुओं में लिंग पुरूष और महिला के बीच शक्ति के कार्य के संबंध में जहाँ पुरूष को महिला से श्रेष्ठ माना जाता है। इस तरह से 'लिंग' एक मनुष्य द्वारा बनाया गया सिद्धान्त है जबकि 'जेडण्र' मानव की प्राकृतिक या जैविक विशेषता है। महिलाओं और पुरूषों को शारीरिक दृष्टि से भेदभाव के अलावा उनके व्यवहार, कपड़े, बोलचाल से स्पष्ट होता है। भारतीय समाज में लिंग असमानता का मूल कारण पितृसत्तात्मक व्यवस्था है। वाल्बे के अनुसार ''पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना है ऐसी प्रक्रिया और व्यवस्था है जिसमें आदमी औरत पर अपना प्रभुत्व जमाता है, उसका दमन करता है और उसका शोषण करता है।'' परिवार समाज की सबसे लघु इकाई होता और यहीं से ही स्त्री के साथ जन्म से भेदभाव होना प्रारम्भ करना पड़ता है। जन्म के समय पुत्र होने पर मंगल गीत गाए जाते है थाली बजाई जाती है परिवार में हर्ष फायर भी किए जाते हैं यदि पुत्री हुई तो न कोई मंगल गीत न हर्ष फायर। पालन पोषण में शिक्षा तथा घर के कार्य में भी भेदभाव किया जाता है। घर कार्य खाना बनाना, पानी भरना साफ–सफाई इत्यादि कार्य बेटियों से करवाए जाते है तथा लड़को को शुरू से ही बताया जाता है कि ये कार्य तुम्हारा नहीं है ये तो लड़कियाँ ही करती है। ये मानसिकता विकसित परिवार से ही की जाति है।

हमारे देश में लिंग आधारित असमानता का स्तर अधिक व्यापक स्तर पर देखने को मिलता रहा है। जन्म से लेकर मृत्यु तक, शिक्षा से लेकर रोजगार तक हर जगह पर किसी न किसी रूप में लैंगिक असमानता साफ–साफ दिखाई देती है। इसमें राजनीतिक पहलू बहुत बड़ी भूमिका निभाते हैं। वर्ल्ड इकनॉमिक फोरम द्वारा वर्ष 2019 में वैश्विक स्त्री–पुरूष समानता सूचकांक की हालिया सूची में भारत घाना, रवांडा और भूटान जैसे देशों से भी पीछे है। भारत लैंगिक असमानता में 129 है देशों में से 95 वे पायदान पर है जो चिन्ता का विशय है लैंगिक असमानता वाली मनसिकता शुरू कैसे होती है? इसका कारण सामाजीकरण की लड़कियों को जन्म से डरकर और दबकर और हावी रहना सिखाया जाता है, और लड़कों को मजबूत और हावी रहना

सिखाया जाता है। ''संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा किए गए सर्वेक्षण के आधार पर हमारे देश में प्रतिवर्ष डेढ़ करोड़ लड़कियों जन्म लेती है जिसमें से 25 लाख 15 वर्ष की उम्र से पहले ही मर जाती है। इन लड़कियों की मौत का कारण समाज में महिलाओं के प्रति भेदभाव का व्यवहार है।'' स्वास्थ्य, शिक्षा, भोजन तथा खेलकूद के मामले में हमेशा से ही ग्रामीण समाज में भेदभाव देखा जाता है जो स्पष्ट रूप से लैंगिक भेदभाव को दर्शाता है। लड़कों के मुकाबले अत्यधिक काम करती है। शहरों में थी यह स्थिति कुछ ज्यादा अच्छी नहीं है।

भारत में महिलाओं पर हो रहे अत्याचार, शोषण घरेलू हिंसा लिंग असमानता को दूर करने के लिए संविधान की प्रस्तावना में कहा गया है कि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सभी चाहे वह स्त्री हो या पुरूष को समानता और अवसर की स्वतंत्रता प्रदान करेंगे। महिलाओं को वोट देने का अधिकार भी इसी क्रम में आता है। पहले भारत में महिलाओं को मताधिकार के उपयोग से वंचित रखा गया वस्तु स्वतंत्रता संग्राम में स्त्रियों के सहयोग को 1919 में भारत समान अधिनियम द्वारा पहली बार महिलाओं को वोट देने का अधिकार मिला। संविधान के अनुच्छेद 15 में भी धर्म, जाति, लिंग, जन्म स्थान के आधार पर किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जाएगा तथा 16 (4) में नौकरी में भी आरक्षण का प्रावधान किया गया है। 15 (3) में राज्य बच्चों और महिलाओं के विकास के लिए विशेष प्रावधान बनाने के लिए अधिकारित है। अनुच्छेद 23 में किसी भी स्त्री व बालक को बलपूर्वक श्रम नहीं काराया जाएगा। इसके अतिरिक्त राज्य के नीति निदेशक तत्वों में महिला के लिए भी अनेक ऐसे प्रावधानों को प्रदान करता है जो महिलाओं की सुरक्षा और भेदभाव से रक्षा करने में मदद करता है। अब महिलाऐं भी प्रत्येक क्षेत्र में पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर रही है और अपने वर्तमान के साथ–साथ भविष्य के प्रति भी गम्भीर है। कोई भी क्षेत्र हो महिलाऐं अपने कौशल और सूझबूझ का परिचय दे रही हैं। परन्तु फिर भी मानसिक, शारीरिक और यौन उत्पीड़न, स्त्री द्वेश तथा लिंग असमानता इनमें से अधिकांश के सामने कभी न कभी आयी हैं और जीवन सामने कभी न कभी किसी न किसी रूप में सामने आयी है और जीवन का हिस्सा बन गई है। महिलाओं को भारतीय संविधान में दिए गए कानून का ज्ञान हो जिससे वे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो महिलाओं को कुछ अधिकार भी प्रदान किए है :–

1. **समान वेतन का अधिकार** :– समान पारिश्रामिक अधिनियम, 1976 का लक्ष्य पुरूष और महिला कामगारों को समान पारिश्रामिक का भुगतान तथा रोजगार के मामले और उससे जुड़े अथवा आनुशंगिक मामलों में महिलाओं के विरूद्ध लिंग के आधार पर भेदभाव रोकना है।
2. **घरेलू हिंसा के खिलाफ अधिकार** :– ये अधिनियम मुख्य रूप से पति, पुरूष लिव इन पार्टनर या रिश्तेदारों द्वारा एक पत्नी, एक महिला लिव इन पार्टनर या फिर घर में रह रही किसी भी महिला जैसे माँ या बहन पर की गई घरेलू हिंसा से सुरक्षा करने के लिए बनाया गया है। स्त्री स्वयं या उनकी ओर से कोई भी शिकायत दर्ज करा सकता है।
3. **सम्पत्ति पर अधिकार** :– हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 के तहत नए नियमों के आधार पर पैतृक सम्पत्ति पर महिला और पुरूष दोनों का बराबर हक है किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं होगा।
4. **मातृत्व संबंधी लाभ के लिए अधिकार** :– मातृत्व लाभ कामकाजी महिलाओं के लिए सिर्फ सुविधा नहीं बल्कि ये उनका अधिकार है। मातृत्व लाभ अधिनियम के तहत एक नई माँ के प्रसव के बाद 12 सप्ताह (तीन महीने) तक महिला के वेतन में कोई कटौती नहीं की जाती ओर वो फिर से काम शुरू कर सकती है।
5. **रात में गिरफ्तार न होने का अधिकार**:– एक महिला को सूरज डूबने के बाद और सूरज उगने से पहले गिरफ्तार नहीं किया जा सकता, किसी खास मामले में एक प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट के आदेश पर ही ये सम्भव।
6. **कन्या भ्रूण हत्या के खिलाफ अधिकार** :– भारत के प्रत्येक नागरिक का ये कर्तव्य है कि वो एक महिला को उसके मूल अधिकार– 'जीने के अधिकार' का अनुभव करने दें। गर्भाधान और प्रसव से पूर्व पहचान करने की तकनीक (लिंग चयन पर रोक) अधिनियम (PCPNDT) कन्या भ्रूण हत्या के खिलाफ अधिकार देता है।
7. **गरिमा और शालीनता के लिए अधिकार** :– किसी मामले में अगर आरोपी एक महिला है तो, उसपर की जाने वाली कोई भी चिकित्सा जांच प्रक्रिया किसी महिला द्वारा या किसी दूसरी महिला

की उपस्थिति में ही की जानी चाहिए न कि किसी पुरूष कि उपस्थिति में।

8. **काम पर हुए उत्पीड़न के खिलाफ अधिकारः**– काम पर हुए यौन उत्पीड़न अधिनियम के अनुसार आपको यौन उत्पीड़न के खिलाफ शिकायत दर्ज करने का पूरा अधिकार है चाहे फिर छेड़छाड़ अभद्र तरीके से टिप्पणी करना हो देखता भी हो।
9. **नाम न छापने का अधिकार** :– यौन उत्पीड़न की शिकार महिलाओं को नाम छापने देने का अधिकार है। अपनी गोपनीयता की रक्षा करने के लिए यौन उत्पीड़न की शिकार हुई महिला अकेले अपना बयान किसी महिला पुलिस अधिकारी की मौजूदगी में या फिर जिलाधिकारी के सामने दर्ज करा सकती है।
10. **मुफ्त कानूनी मदद क लिए अधिकार** :– बलात्कार की शिकार हुई किसी भी स्त्री को मुफ्त कानूनी मदद पाने का पूरा अधिकार है। स्टेशन हाउस ऑफिसर के लिए ये जरूरी है कि वो विधिक सेवा प्राधिकरण को वकील की व्यवस्था करने के लिए सूचित करें।

इन कानूनी अधिकारों के अतिरिक्त महिलाओं के लिए विभिन्न सुरक्षत्मक विधान भी उनके शोषण को समाप्त करने तथा उन्हें समानता का दर्जा प्रदान करने के लिए संसद द्वारा समय–समय पर पारित किये गये हैं। दहेज निशेध अधिनियम 1961, 1954 में अंतर्जातीय या अंतर धर्म से शादी करने वाले विवाहित जोड़ों के विवाह को सही दर्जा देने के लिए, कल्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए 1994 में प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम बना जिसमें लिंग परीक्षण को अनुचित माना व सजा का प्रावधान भी किया गया है। भारतीय दंड संहिता 1860 में धारा 304 – बी को दहेज केस में दुल्हन की हत्या या मृत्यु होने पर विशेष अपराध बनाकर आजीवन कारावास का दंड देने का प्रावधान किया गया है। महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों को रोकने के लिए अपराधिक कानून और अपराधिक कानून संशोधित अधिनियम 2013 में बना इसमें कानून के द्वारा लैंगिक अपराधों से जुड़े भारतीय दण्ड संहिता, भारत परमन संहिता, आपराधिक प्रक्रिया संहिता कानूनों में आव यक संशोधन किया गया। इसे गैर–जमानती बनाया गया। कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न प्रतिशेध अधिनियम 2013 द्वारा सरकारी कार्यक्षेत्र, घरेलू श्रमिक, दैनिक मजदूरी, स्वयं सेवक इत्यादि क्षेत्रों में कार्यरत महिलाओं के यौन शोषण से सुरक्षा और इसकी रोकथाम के लिए बनाया गया है।

अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय ने मानवाधिकारों के अनुपालन का परीक्षण करते समय लिंग संबंधी मानदण्ड को विश्लेषण का महत्वपूर्ण वर्ग माना है। महिलाओं के साथ किये जा रहे भेदभाव को दूर करने के लिए विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय सम्मेलनों में कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किये गये है। महिलाओं की स्थिति से सम्बद्ध आयोग ने वर्ष 1974 की अपनी रिपोर्ट में महिलाओं के साथ भेदभाव को इन शब्दों में स्पष्ट किया ''लिंग के आधार पर विशिष्टता प्रदान करना, वंचित करना या प्रतिबंद्ध लगाना, जिसकी परिणिति या प्रभाव मानव अधिकारों को नकारने या उसका उपयोग करने से रोकने में हो तथा राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा सार्वजनिक जीवन में किसी अन्य क्षेत्र के मूलभूत स्वतंत्रताओं के हनन के रूप में है।'' लिंग भेद तथा शोषण की प्रवृत्तियाँ अपने चरम पर उस समय दिखाई देती है जब स्त्री को धन या सम्पत्ति के रूप में, भोग विलास और उत्पादन के एक साधन के रूप में देखा जाता है। विडम्बना यह है कि स्वंय उपेक्षितों ने लिंग सम्बंधि परम्पराओं, भेदभावों, असमानता को चाहे अनचाहे जीवन के अपरिहार्य अंग के रूप में अधिकतर ने स्वीकार कर लिया है।

लिंग भेद विकसित और विकाशसील दोनों ही देशों में व्याप्त व्यापक समस्या है। घर के बाहर तथा अन्दर दोनों ही स्थानों पर महिलाओं को सत्ता के केन्द्र से वंचित रखा जाता है यह हमें आदिकाल से वर्तमान तक देखने को मिलता है बस इसमें कुछ अन्तर आया है जो महिलाओं की बढ़ती हुई भूमिका की ओर इंगित करता है। आज महिलाऐं घर और बाहर की दुनियाँ में सफलता पूर्वक कार्य कर रही है पर ये बहुत थोड़ा ही है। ''मानव समाज का निर्माण तथा विकास नारी तथा पुरूष दोनों के समन्वय से ही सम्भव है। समाजात्थान के लिये दोनों को ही बराबर का महत्व दिया जाना अत्यन्त आवश्यक है। ''अंततः सरकार द्वारा एक ऐसा भेदभाव (असमानता) विरोधी फ्रेमवर्क तैयार किया जाना चाहिए, जिसमें वे सभी क्षेत्र में शामिल हो जाऐं जिनमें महिलाओं को समान अधिकारों यदि दोनों में से एक निर्बल है तो समाज की उन्नति सुचारू रूप से नहीं हो सकती है।'' अंततः सरकार द्वारा एक ऐसा भेदभाव (असमानता) विरोधी फ्रेमवर्क तैयार किया जाना चाहिए, जिसमें वे सभी क्षेत्र शामिल जाऐं जिनमें महिलाओं को समान अधिकारों की आवश्यकता है और उसे लागू किया जाना चाहिए। न्यायमूर्ति वर्मा समिति की रिपोर्ट में इस दिशा में सिफारिश की गई थी कि सरकार को

अधिकारों के बारे में एक ऐसा कानून चाहिए जिसमें विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की समानता की गारंटी दी जा सके। महिलाओं को स्वयं भी प्रयास करना चाहिए और पुरूषों को भी चाहिए कि वे पुरूषवादी मानसिकता का त्याग कर स्वयं की सोच को बदलें।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. डॉ. अजीत रायजादा – महिला उत्पीड़न समस्या और समाधान म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल द्वारा प्रकाशित
2. कीर्ति सिंह – इन्क्यूजन से साभार, (रोजगार समाचार 24–30 अगस्त 2014)
3. प्रभा खेतान – स्त्री उपेक्षिता, सीमोन द बोड़वार (अनु.) हिन्दी पॉकेर बुक संस्करण 2002, नई दिल्ली
4. निवेदिता मेनन – नारीवादी, राजनीतिः संघर्ष एवं मुद्दे, सम्पादक साथना आर्य, निवेदिता मेनन जिनी लोकनीता पृ.9
5. https://hi/wikipedia.org/wiki/घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005.

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 12, Jan. 2020

संस्कृत साहित्य में रूपकों का अभ्युदय

कोमल
सहायक प्राध्यापिका, संस्कृत विभाग, चौधरी देवीलाल विश्वविद्यालय, सिरसा

रूपक सांहित्य का अभिन्न अंग है। साहित्य की कीर्ति विश्वभर में रूपकों के योगदान से ही चमकने लगती है। दृश्यकाव्य के लिए 'रूपक' शब्द का प्रयोग किया जाता है तथा रूपकों का सबसे विशिष्ट अंग नाटक है। जिस ग्रंथ ने साहित्य के सौन्दर्य को, कोमल कल्पना को तथा मनोहर रस परिपाक को संसार के मनीशियों के सामने प्रस्तुत किया वह महाकवि कालिदास कृत नाटक (अभिज्ञान – शाकुन्तल) ही था। काव्य श्रवण मार्ग से चित्त को आकृष्ट करता है लेकिन नाटक नेत्र मार्ग से हृदय को चमत्कृत करता है। किसी वस्तु को देखने का आनन्द उसके सुनने की अपेक्षा कहीं अधिक होता है। नाटक की समता चित्र से की गई है।[1] जिस प्रकार चित्र विभिन्न रंगों द्वारा दर्शकों के चित्त को आकर्शित करता है उसी प्रकार नाटक भी नेपथ्य, साजसज्जा के द्वारा अद्भूत प्रभाव डालता है। नाटक सर्वसाधारण व्यक्ति को भी प्रभावशाली तरीके से आकर्षित करता है। नाटक कवित्व की चरम सीमा माना जाता है – नाटकान्तं कवित्वम्।

भरतमुनि ने नाट्य को ''सार्ववर्णिक'' वेद कहा है क्योंकि अन्य वेद ब्राह्मणों के लिए उपयोगी होते हैं किन्तु नाट्य का उपयोग तो प्रत्येक वर्ण के लिए है। नाटक का विषय तीनों लोकों के भावों का अनुकीर्तन करता है।

त्रैलोक्यस्यास्य सर्वस्य नाट्यं भावानुकीर्तनम्।
(नाट्यशा. 1/104)

भरतमुनि कहते हैं कि नाटक अनेक भावों को प्रदान करता है अज्ञानियों को ज्ञान प्रदान करना, शूरवीरों को उत्साह प्रदान करना कुल मिलाकर नाटक लोकवृत्त का अनुकरण है।

नानाभावोपसम्पन्नं नानावस्थान्तरात्मकम्।
लोकवृत्रानुकरणं नाट्यमेतन्मया कृतम्।।
(नाट्यशास्त्र 1/109)

नाट्य शास्त्रकार का कहना है कि कोइ भी ज्ञान, शिल्प, विद्या, योग अथवा कर्म ऐसा नहीं है जो इस नाट्य में दिखलाई न पड़ता हो।

न तद्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।
न स योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन् यन्न दृश्यते।।
(नाट्य शास्त्र 1/114)

नाटक की उत्पत्ति :– भारतीय नाट्य शास्त्र में नाटकोत्पत्ति के विषय में एक कथा प्रचलित है। सांसारिक मनुष्यों को खिन्न देखकर इन्द्रादि देवताओं ने ब्रह्म के पास जाकर ऐसे वेद के निर्माण की प्रार्थाना की जिससे स्त्री– शूद्रादि सभी का मनोरंजन हो। तब ब्रह्म जी ने चारों वेदों का ध्यानकर ऋग्वेद से पाठ्य, सामवेद से गान, यत्रुर्वेद से अभिनय तथा अथर्ववेद से रस को ग्रहण कर 'नाट्यवेद' नामक पाँचवें वेद की रचना की।

जग्राह पाठयमृग्वेदात्सामभ्यो गीतमेव च।
यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि।।
(नाट्य. 1/17)

रूपक (नाटक) के प्रकार

आचार्य विश्वनाथ कृत साहित्यदर्पण में रूपक के दस भेद बतलाए है।

''नाटकमथप्रकरणं शणव्यायोग समवकार डिमाः।
ईहामृगांकवीथ्य : प्रहसनमिति रूपकाणि दश।।''

अर्थात् नाटक, प्रकरण, भाण, त्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, अड., वीथी और प्रहसन इनके अतिरिक्त अठारह उपरूपक भी बताएं गए हैं नाटिका, त्रोटक, गोष्ठी, सट्टक, नाट्यरासक, प्रस्थान, उल्लाप्य, काव्य, प्रेंखण, रासक, संलापक, श्रीगदित, शिल्पक, विलासिका, दुर्मल्लिका, प्रकरणी, हल्लीश तथा शणिका।

नाटक –

''नाटकं ख्यातवृत्तं स्यात्पञ्चसंधिसमन्वितम्''।

अर्थात् नाटक की कथावस्तु इतिहास पुराणादि से प्रसिद्ध होनी चाहिए। नाटक पाँच सन्धियों (मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श, निर्वहण) से युक्त होना चाहिए। नाटक में 5 से 10 अड. होने चाहिए।[2] नायक राजा कुलीन, धीरोदात्त, प्रतापी, दिव्य, दिव्यादित्य क्षत्रिय या

[1] सन्दर्भेशु दशरूपंक श्रेयः। तद्धि चित्रं चित्रपटवद् विशेषसाकल्यात्। वामन–काव्यालंकार सूत्र 1/330–31

[2] पञ्चादिका दशपरास्तत्रांगा : परिकीर्तिताः।

क्षत्रिय भिन्न होना चाहिए।[3] श्रृंगार या वीर रस प्रधान रूप में तथा अन्य रस गौण रूप में होने चाहिए।[4] कालिदास का ''अभिज्ञान शाकुन्तलम्'' जिसकी कथावस्तु महाभारत/पद्मुपुराण से ली गई है, इसमें पाँचों सन्धियों का प्रयोग हुआ है। अभिज्ञान शाकुंतल में सात अंक हैं, नायक धीरोदात्त कुलीन राजा है तथा इस नाटक में श्रृंगार व वीर रस का आधिक्य है। 'उत्तररामचरितम्' भी नाटक का प्रसिद्ध उदाहरण है।

प्रकरण –

''भवेत्प्रकरणे वृत्तं लौकिकं कविकल्पितम्।
श्रृंगारोऽगी नायकस्तु विप्रोऽमात्योऽथवा वणिक्।।

अर्थात् प्रकरण में कथावस्तु लौकिक एवं कविकल्पित होती है। श्रृंगार रस मुख्य होता है। नायक ब्राह्मण, मन्त्री या वैश्य होता जो विघ्नपूर्ण धर्म, काम और अर्थ में आसक्त धीरप्रशान्त होता है। प्रकरण में नायिका कुलीन स्त्री, कहीं वेश्या और कभी दोनों प्रकार की होती है,[5] प्रकरण में जुआरी, चौर (ठग) आदि होते हैं।[6] जैसे – 'मृच्छकटिकम्' की कथा लौकिक एवं कविकल्पित है, धीरप्रशान्त ब्राह्मण नायक है, मृच्छकटिकम् में 10 अंक हैं तथा श्रृङार रस है। इसी प्रकार 'मालतीमाधवम्' में मन्त्री नायक तथा 'पुश्प शोभितम्' में वैश्य नायक मिलता है।

शण –

''शण : स्याद् धूर्तचरितो नानावस्थान्तरात्मकः।
एकांक एक एवात्र निपुण : पण्डितों विटः।।''

अर्थात् धूर्तों के चरित्र से युक्त अनेक अवस्थाओं से व्याप्त शण एक अंक वाला ही होता है। शण में विट जोकि निपुण व पण्डित होता है – रंग में अपनी या दूसरों की अनुभूत बातों को प्रकाशित करता है। सम्बोधन, उक्ति – प्रत्युक्ति आकाशभाषित होती है।[7] शौर्य और सौभाग्य के वर्णन से वीर और श्रृङार रस को सूचित किया जाता है।[8] शण में वृति प्रायः 'भारती' है[9], मुख एवं निर्वहण दो सन्धियाँ और दस लास्य के अंग होते हैं।[10] शण का मुख्य उदाहरण – 'लीलामधुकरम्' है।

व्यायोग –

''ख्यातेतिवृत्तो व्यायोग : स्वलप्स्त्रीजनसंयुतः।
हीनो गर्भविमर्शाभ्यां नरैर्बहुभिराश्रितः।।''

अर्थात् व्यायोग की कथा इतिहास प्रसिद्ध होती है। इसमें स्त्रियों की संख्या स्वल्प तथा पुरूषों की संख्या अधिक होती है एवं गर्भ व विमर्श सन्धियों का अभाव होता है। अंग एक ही होता है, व्यायोग का नायक धीरोद्धत राजर्षि या दिव्यपुरूष होता है[11] तथा हास्य, श्रृगांर एवं शान्त के अतिरिक्त कोई अन्य रस प्रधान होता है।[12] व्यायोग का प्रमुख उदाहरण – 'सौगन्धिका – हरणम्' है।

समवकार –

''वृत्तं समवकारे तु ख्यांत देवासुराश्रयम्।
संधयो निर्विमर्शास्तु त्रयोऽंगास्तत्र चादिमे''।।

अर्थात् 'समवकार' में देव और असुरों से संबंधित पुराण एवं ऐतिहासिक कथानक होना चाहिए। इसमें विमर्श संधि का अभाव होता है और तीन अंग होते हैं। समवकार में नायकों की संख्या 12 होती है जो देवता और मनुष्य होते हैं।

''नायका द्वादशोदात्ता : प्रख्याता देवमानवाः''

समवकार में प्रथम अंग में दो सन्धियाँ तथा दूसरे व तीसरे में एक–एक सन्धि होती है। 'समुद्रमन्थन' इसका सर्वोत्तम उदाहरण है।

डिम –

''मायेन्द्रजालसंग्रामक्रोधोद्भ्रान्तादिचेष्टितैः
उपरागै च भूयिष्ठो डिम : ख्यातेतिवृत्तिकः।।

अर्थात् माया, इन्द्रजाल, संग्राम, क्रोध तथा उद्भ्रान्त आदि चेष्टाओं से युक्त, सूर्यग्रह तथा चन्द्रग्रहण

---

[3] प्रख्याततवंशो राजर्शिर्धीरोदात्त : प्रतापवान्। दिव्योऽथ दिव्यादिव्यों वा गुणवान्नायको मतः।।

[4] एक एव भवेदंगी श्रृंगारो वीर एव वा। अंगमन्ये रसा : सर्वे कार्यो निर्वहणेऽद्भुतः।।

[5] नायिका कुलजा क्वापि वेश्या क्वापि द्वयं क्वचित्।

[6] कितवद्यूतकारादिचेट संकुलः।।

[7] सम्बोधनोक्तिप्रत्युक्ती कुर्यादाकाशभाशितैः।

[8] सूचयेद्वीरश्रृगांरौ शौर्यसौभाग्यवर्णनैः।

[9] वृत्ति : प्रायेण भारती।

[10] मुखनिर्वहणे संधी लास्यांगानिदशपि च।

[11] राजर्शिरथ दिव्यो वा श्वेद्धीरोद्धतश्च सः।

[12] हास्यश्रृंगार शान्ते य इतरेऽत्रांगिनो रसाः।

से व्याप्त इतिहास प्रसिद्ध कथानक वाला डिम होता है। इसमें 16 नायक होते हैं जो देवता, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत, प्रेत – पिशाचादि होते हैं।

''नायका देवगन्धर्वायक्षरक्षोमहोरगाः।।
भूतप्रेतपिशाचाद्या : शोडशात्यन्तमुद्धताः।।

डिम में अंगों की संख्या चार होती है तथा इसका प्रधान रस रौद्र होता है। 'त्रिपुरदाह' डिम का प्रमुख उदाहरण है।

ईहामृग –

''ईहामृगो मिश्रवृत्त चतुरङ : प्रकीर्तित :।
मुखप्रतिमुखे संधी तत्र निर्वहणं तथा।।''

अर्थात् चार अंगों से युक्त ईहामृग की कथावस्तु ऐतिहासिक तथा कविकल्पित दोनों होती है। इसमें मुख, प्रतिमुख तथा निर्वहण तीन संधियों का समन्वय होता है। ईहामृग का नायक प्रसिद्ध धीरोदात्त होता है। 'कुसुम शेखरविजय' इसका प्रमुख ग्रन्थ है।

अंक –

''उत्सृष्टिकांक एकांको नेतार : प्रकृता नराः।
रसोऽत्र करूण : स्थायी बहुस्त्रीपरिदेवितम्।।''

अर्थात् अंक में एक ही अंक होता है, इसका नायक कोई साधारण पुरूष होता है। स्त्रियों के अत्यधिक विलाप से युक्त करूण स्थायीरस होता है। कथा इतिहास प्रसिद्ध होती है, सन्धि, वृत्ति तथा अंग शण के समान होते है ''शणवत्संधिवृत्यांगनि'' 'शर्मिष्ठा – ययाति' जिसमें स्त्री विलाप का आधिक्य है इसका सर्वोत्तम उदाहरण है।

वीथी –

''वीथ्यामेको भवेदंक : कश्चिदेकोऽत्र कल्प्यते।
टाकाशभाशितैरूक्तैश्चित्रां प्रत्युक्तिमाश्रितः।।''

अर्थात् वीथी में एक अंक होता है। इसमें एक पुरूष को नायक के रूप में कल्पित कर लिया जाता है, आकाशभाषित के द्वारा उक्ति–प्रत्युक्ति की योजना होती है।

''सूचयेद् भूरिश्रृंगार किञ्चिदन्यान्रसान्प्रति।
मुखनिर्वहणे सन्धी अर्थप्रकृतयोऽखिलाः।।''

श्रृंगार की अधिकता के साथ अन्य रसों की भी सूचना दी जाती है, इसमें मुख व निवर्हण सन्धियों के साथ अर्थप्रकृतियाँ भी होती है। 'मालविका' वीथी का उत्तम उदाहरण है।

प्रहसन –

''शणवत्सन्धिसन्ध्यगंलास्यांगाडैर्विनिर्मितम्।
श्वेत्प्रहसनं वृत्तं निन्द्यानां कविकल्पितम्
अङी हास्यरसस्तत्र वीथ्यंगानां स्थितिनीवा।।''

अर्थात् प्रहसन में शण के समान सन्धि, सन्धयंग, लास्यांग, और अंगों के द्वारा सम्पादित, निन्दनीय पुरूषों का कविकल्पित वृत्तान्त होता है। हास्यरस प्रधान होता है। 'कन्दर्पकेलिः', 'धूर्तचरितम्' इसके सर्वोत्तम उदाहरण हैं।

उपसंहार :– संस्कृत भाषा का साहित्य अनेक अमूल्य ग्रंथों का सागर है, इतना समृद्ध साहित्य किसी भी दूसरी प्राचीन भाषा का नहीं है। इसी प्रवाह में रूपकों ने भी अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देकर संस्कृत साहित्य को विपलु ज्ञान राशि का भण्डार प्रदान किया है।

सन्दर्भ सूची :–

1. काव्यालंकार सूत्र – वामन
2. साहित्य दर्पण – विश्वनाथ
3. नाट्शास्त्र – भरतमुनि
4. गद्य भाग – संस्कृत साहित्य का इतिहास (आचार्य बलदेव उपाध्याय)